ज्ञानामृत

मार्च, 1982
वर्ष 17 ❋ अंक 9

मूल्य 2.00

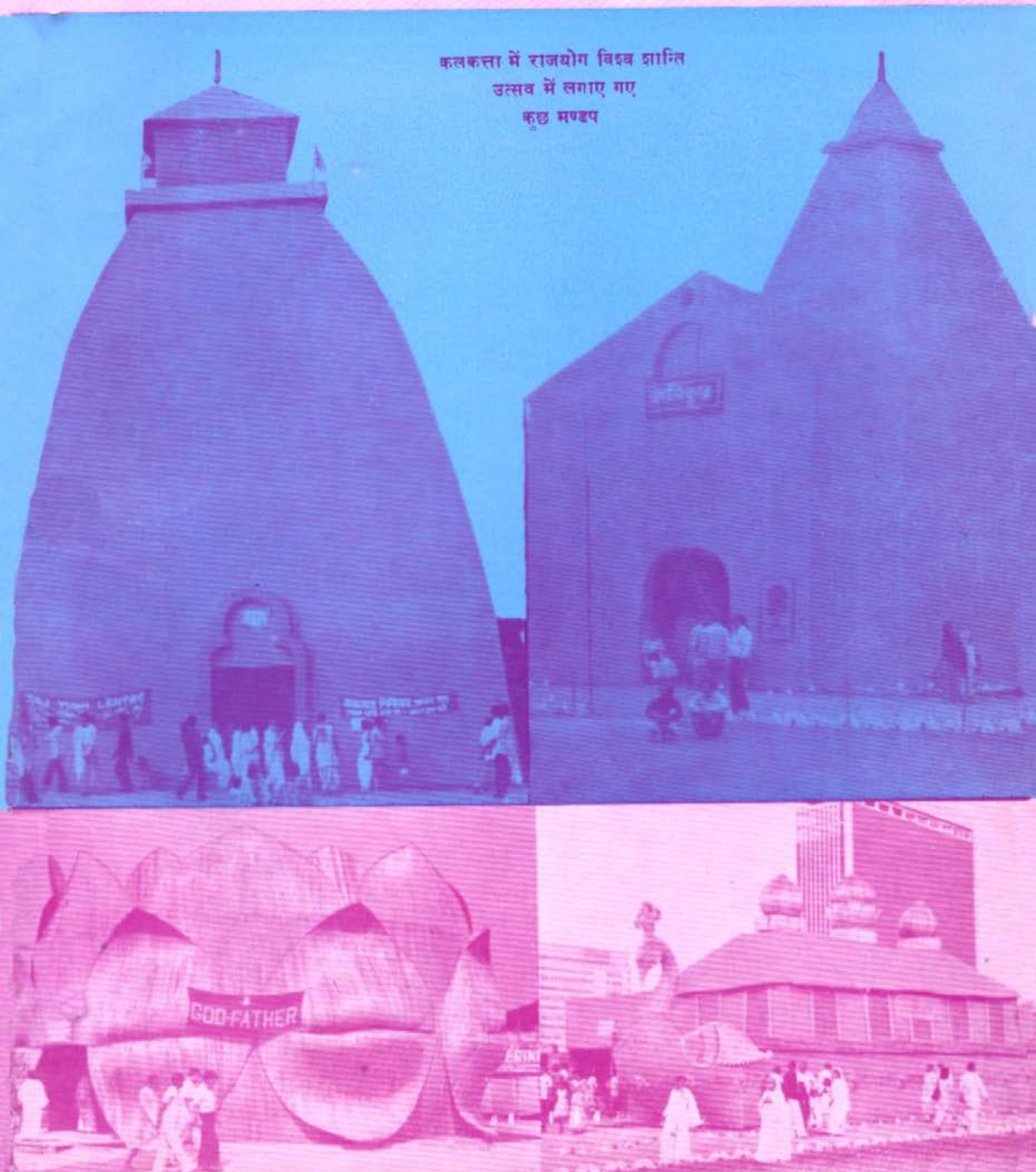

कलकत्ता में राजयोग विश्व शान्ति
उत्सव में लगाए गए
कुछ मण्डप

अजमल खां पार्क, नई दिल्ली में आयोजित ४६वीं त्रिमूर्ति शिव जयन्ती महोत्सव के कार्यक्रम में मंच पर (बाएं से) ब्र ०कु० राजकुमार, चीफ कमर्शियल आफीसर, डेसू, भ्राता बहारूल-इस्लाम, न्यायाधीश उच्चत्तम न्यायालय, ब्र० कु० चक्रधारी जी, ब्र० कु० हृदय मोहिनी जी तथा ब्र० कु० आशा जी

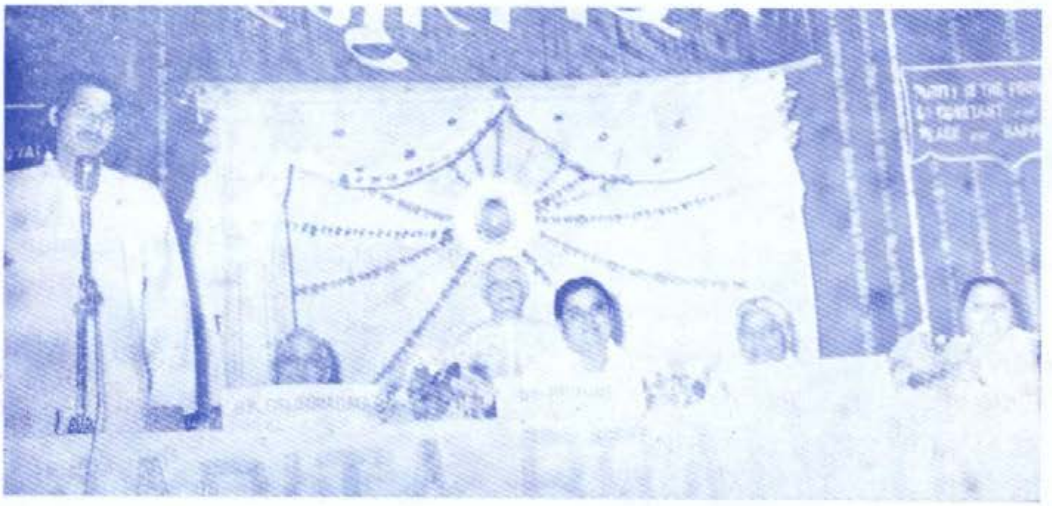

↑
बम्बई में बिरला मातुश्री सभागृह में अव्यक्त दिवस कार्यक्रम में मंच पर उपस्थित हैं (बाएं से) ब्र० कु० राबर्ट (अमेरिका) ब्र० कु० त्रिज इन्द्रा जी, ब्र० कु० मोहिनी जी (अमेरिका) ब्र० कु० प्रकाशमणि जी, मुख्य प्रशासिका ब्र० कु० ई० विश्वविद्यालय, तथा ब्र० कु० मोहिनी जी

← अहमदाबाद में १८ जनवरी स्मृति दिवस पर आयोजित कार्यक्रम में ब्र० कु० जानकी जी पधारीं थी। ब्र० कु० मोहन भाई पिताश्री प्रजापिता ब्रह्मा का संक्षिप्त परिचय दे रहे हैं।

घाना में न्यायाधीश भ्राता धन झापन (उमबुडजमन) विश्व शान्ति दिवस पर ब्रह्मा बाबा की जीवन कहानी सुनाते हुए।

धर्मस्थाला (दक्षिण कनेरा) में भगवान बाहुबली प्रतिष्ठापन तथा महामस्तकाभिषेक के अवसर पर ब्र० कु० ई० विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन कर्नाटक के वित्त तथा परिवहन राज्यमन्त्री द्वारा सम्पन हुआ।

कलकत्ता में राजयोग विश्व-शान्ति महोत्सव के अवसर पर निकाली गई शान्ति यात्रा में विदेश से पधारे ब्र० कु० भाई-बहनों द्वारा निर्मित झाँकी-जो कि दर्शित करती थी कि परमात्मा ही सुख, शान्ति आनन्द का दाता है

कलकत्ता में शान्ति यात्रा में निकाली गई इस झाँकी में दर्शाया गया था कि आज के मानव को रावण की जंजीरों से एक परमात्मा ही छुड़ा सकता है।

कलकत्ता में राजयोग विश्व शान्ति उत्सव में महिला सम्मेलन में मंच पर (दाएं से बाएं) बहन प्रो० बसन्ती चौधरी, पद्मा खास्तगीर, न्यायाधीश कलकत्ता उच्च न्यायालय, ब्र० कु० निर्मल शान्ता जी, ज्योतिर्मयी नाग, न्यायाधीश कलकत्ता उच्च न्यायालय, ब्र० कु० आरती जी, ब्र० कु० गायत्री मोदी, तथा ब्र० कु० आशा जी विराजमान हैं।

भ्राता मानिक चन्द बाजपेयी, इन्दौर प्रैस कल्ब के प्रधान आध्यात्मिक कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए। चित्र में (बाएं से दाएं) न्युयार्क से पधारीं ब्र० कु० मोहिनी जी, भ्राता दिवेन्द्र शर्मा, इन्दौर विश्वविद्यालय के उपकुलपति, भ्राता बाजपेयी तथा ब्र० कु० सरोज जी। ↓

भ्राता प्रभुदास पटवारी भूतपूर्व राज्यपाल तमिलनाडू, मनीनगर अहमदाबाद) सेवा केन्द्र पर अव्यक्त दिवस कार्यक्रम के अवसर पर ब्रह्मा बाबा के चित्र का अनावरण करते हुए। साथ में ब्र० कु० सरला खड़ी हैं।

भ्राता सूर्यकान्त मेहता, जिलाधीश पटनगर, गांधीनगर (गुजरात) 13वें 'अव्यक्त दिवस' कार्यक्रम में प्रवचन करते हुए।

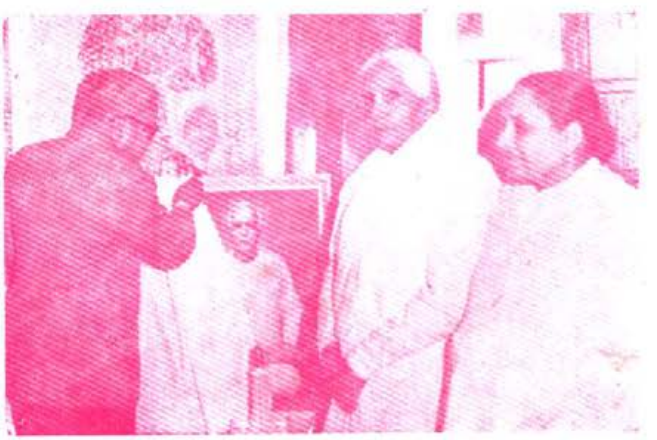

लखनऊ में हुए पिताश्री जी के '१३वें अव्यक्त दिवस' के अवसर पर भ्राता के० एस० वर्मा, न्यायाधीश इलाहाबाद हाईकोर्ट (लखनऊ शाखा) द्वारा पिता-श्री जी के चित्र अनावरण सम्पन्न

वर्ष १७ अंक ६ मार्च १९८२ मूल्य २.००

अमृत-सूची

क्र० सं०	विषय	पृष्ठ
१.	आबू के शिखर से	१
२.	आत्मा और अन्तरात्मा (सम्पादकीय)	२
३.	अच्छाई और बुराई में अन्तर	३
४.	अपनी कहानी कहती हुई अरावली की पर्वत मालायें	६
५.	पढ़ाई, लड़ाई, चढ़ाई, कमाई	११
६.	आओ मिलकर झूम उठे हम	१२
७.	टेढ़ी खीर नहीं, स्वादिष्ट एवं पौष्टिक खीर	१३
८.	सतयुग और समय	१५
९.	परमात्मा शिव द्वारा 'आर्य' और 'अनार्य' का स्पष्टीकरण	१७
१०.	मल्लयुद्ध	२१
११.	सम्पादक के नाम पत्र	२२
१२.	अंधियारा-उजियारा	२४
१३.	देख कबीरा रोया	२७
१४.	शान्ति की शक्ति	२९
१५.	"सुनो"...(कविता)	३२
१६.	सर्वोत्तम त्याग, सर्वोत्तम भाग्य	३३
१७.	कलकत्ता में राजयोग विश्व-शान्ति महोत्सव	३६
१८.	क्या सन्यासी सनातन धर्म के रक्षक हैं ?	३७
१९.	गाड़ी छूटने वाली है (कविता)	३९
२०.	होली का त्योहार	४१
२१.	"विश्व-विनाश एक सत्य, एक सम्भावना"	४३
२२.	बढ़ते जाना...(कविता)	४४
२३.	आध्यात्मिक सेवा समाचार	४५

LIBRARY

आबू के शिखर

विश्व-शान्ति महायज्ञ की सफलता हेतु

विश्व-शान्ति वर्ष मनाएं

माउण्ट आबू—प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय की ओर से १० फरवरी १९८३ से १४ फरवरी १९८३ तक "विश्व शान्ति महायज्ञ" का आयोजन किया जा रहा है। यह महायज्ञ ईश्वरीय विश्वविद्यालय के एक विशाल नए मेडीटेशन हाल में होगा। इस अवसर पर भारत तथा विदेशों से हज़ारों की संख्या में प्रतिनिधि भाग लेंगे।

इस विशाल महायज्ञ के सम्बन्ध में विद्यालय की मुख्य प्रशासिका ब्रह्माकुमारी प्रकाशमणी जी ने माउण्ट आबू स्थित "पाण्डव भवन" में आए कुछ भाई-बहनों के सामने अपने विचार प्रस्तुत करते कहा—"इस कान्फ्रेंस को अभी एक वर्ष पड़ा है—अतः हम सभी एक वर्ष के लिए स्वयं से दृढ़ संकल्प करेंगे कि हमें विश्व में शान्ति के प्रकम्पन फैलाने हैं। अपने शुभ वायब्रेशन द्वारा विश्व की अन्य आत्माओं को पवित्र और श्रेष्ठ बनाने के लिए प्रेरित करना है। हमारा उद्देश्य ही है विश्व में शान्ति स्थापन करने का क्योंकि आज मनुष्य शान्ति की खोज में भटक रहा है। उसे जिस चीज की चाहना है हम उसे वही प्राप्ति कराएं। इस महायज्ञ के लिए हम सभी आपस में मिलकर शान्ति का योगदान दें। यही है सबसे बड़ा सहयोग व सेवा। हम केवल वर्ल्ड पीस डे (विश्व शान्ति दिवस) नहीं, अपितु वर्ल्ड पीस इयर (विश्व शान्ति वर्ष) मनायेंगे। उन्होंने विश्व की सर्व आत्माओं को सम्बोधित करते हुए कहा कि सभी अपने मन के संकल्पों को शान्त व शीतल बनाने की अपने आप से प्रतिज्ञा करें और अपने पवित्र शुद्ध शान्तिमय संकल्पों का सहयोग दें।

□

आत्मा और अन्तरात्मा

बहुत-से अध्यात्मवादी लोग 'आत्मा' शब्द के अतिरिक्त 'अन्तरात्मा' शब्द का भी प्रयोग किया करते हैं। उदाहरण के तौर पर आपने कई लोगों को यह कहते हुए सुना होगा कि—'मेरी अन्तरात्मा इस बात को नहीं मानती। इसी प्रकार, जब कुछ लोगों को किसी विशेष कार्य के लिए कहा जाता है तो वे कहते हैं कि "इस कार्य को करने के लिए मेरी अन्तरात्मा गवाही नहीं देती।" तब प्रश्न उठता है कि शरीर और आत्मा की तो अलग-अलग सत्ता है परन्तु यह 'अन्तरात्मा' क्या है?

इसी प्रकार, आपने देखा होगा कि कुछेक अध्यात्मवादी लोग अपने प्रवचनों में श्रोतागण को कहते हैं कि मनुष्य को अपने अन्दर झांक कर देखना चाहिए कि उसमें अभी क्या-क्या खराबियां हैं जिन्हें अभी निकालना बाकी है। यद्यपि इसमें वे भिन्न शब्दों का प्रयोग करते हैं परन्तु भाव उनका भी यही होता है कि वे अपने अन्तरात्मा में टटोलें। इस प्रसंग में भी प्रश्न उठता है कि 'अपने अन्दर' वाक्यांश से किस सत्ता की ओर इशारा किया जाता है? 'अपने अन्दर' शब्दों का क्या भावार्थ है? आत्मा तो स्वयं ही बिन्दु रूप, सूक्ष्मातिसूक्ष्म एवं अल्पतम है। तब क्या उसके अन्दर और भी कुछ है? क्या झांकने वाले व जिसमें झांकना है, इन दोनों में कुछ अन्तर है?

एक और उदाहरण लें तो हमारा ध्यान उन सन्तमार्गी अथवा भक्तिमार्गी लोगों की ओर जाता है जो बात-बात में यह कहते हैं कि भगवान तो हमारे अन्दर बसता है, इसे अन्य कहीं ढूंढने की क्या आवश्यकता है!" उनके इस कथन का चाहे कुछ भी भाव हो परन्तु प्रश्न यह है कि यहां भी 'अन्दर' शब्द से क्या अभिप्राय है? यदि परमात्मा सर्वव्यापक हो तो वह अणु रूप आत्मा के भीतर कैसे वास कर सकता है? यदि वह सर्वव्यापक न हो तो भी आत्मा जो स्वयं अल्पतम है, उसके "भीतर" कहने का क्या भाव है?

इस विषय में कुछ लोगों को एक उलझन-सी इसलिए महसूस होती है कि अन्तरात्मा शब्द की भांति कुछ और भी शब्द ऐसे हैं जिनमें 'अन्तर' का प्रयोग हुआ होता है और, वहां 'अन्तर' शब्द 'अन्दर' के अर्थ में प्रयोग हुआ होता है। उदाहरण के तौर पर, दो प्रकार की दृष्टियों का उल्लेख करते हुए एक को 'बाह्य दृष्टि' और दूसरी को 'अर्न्तदृष्टि' कहा जाता है। यहां बाह्य नेत्रों अर्थात चर्म-चक्षुओं की देखने की योग्यता को बाह्य दृष्टि और मन द्वारा अनुमानित, कल्पित तथा ज्ञात करने की योग्यता को अन्तर्दृष्टि कहा जाता है जिसका सम्बन्ध बाह्य आंखों से न होकर वैचारिक शक्ति से है। ऐसे शब्दों को लेकर कुछ लोगों के मन में यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या बाह्य दृष्टि और अन्तर्दृष्टि की तरह आत्मा और अन्तरात्मा में भी कोई अन्तर है?

'अन्तरात्मा' शब्द का भावार्थ

वास्तव में 'अन्तरात्मा' शब्द का कोई यह भाव नहीं है कि आत्मा के अन्दर कोई स्थान है और वहां कोई दूसरी आत्मा विराजमान है। आत्मा तो स्वयं ही इतनी सूक्ष्म एवं न्यूनतम परिमाण वाली है कि उससे बढ़कर और कोई सूक्ष्म पदार्थ है ही नहीं कि हम कह सकें कि आत्मा के भीतर अन्य कोई सत्ता अन्तरात्मा नाम से है। परन्तु किसी भाव को व्यक्त करने के लिए यह शब्द गढ़ा गया है। कई बार किसी बात को समझाने के लिए कोई शब्द जो कि पूर्णत:

उपयुक्त नहीं भी होता, बना अथवा अपना लिया जाता है क्योंकि वह उस भाव को थोड़ा-बहुत प्रगट कर लेता है। उदाहरण के तौर पर जब कोई व्यक्ति यह कहता है कि "इस मनुष्य में अहंकार का बीज है", तो उसका कोई यह भाव नहीं होता कि फलों अथवा वनस्पतियों की तरह अहंकार का भी कोई बीज होता है बल्कि उसका अभिप्राय तो केवल यह बताना होता है कि जैसे बीज से फल अथवा वनस्पति पैदा होने की शक्ति बीज में तिरोहित अथवा गुप्त होती है वैसे ही यह मनुष्य अहंकार से सर्वथा शून्य नहीं है बल्कि इसमें भी ऐसी सम्भावनायें तिरोहित हैं कि जिनसे अहंकार पुनः पैदा हो सकता है। इसी प्रकार, 'अन्तरात्मा' शब्द के पीछे भी भाव यही होता है कि आत्मा की जो मौलिकता उसमें तिरोहित है अथवा उसका आदि स्वरूप जो उसमें सार रूप से सुरक्षित है, वह समय-समय पर अंकुरित हो उठता है।

यों देखा जाए तो हरेक वस्तु की एक नाभिका (Nucleus), उसकी कोई गिरी (Core), कोई गुठली (Hard Core), कोई केन्द्र-स्थान (Centre), कोई धुरी (Axis), आदि की तरह कोई चीज़ होती ही है। परमाणु (Atom) में भी इलेक्ट्रोन और प्रोटोन के अतिरिक्त न्यूक्लियस होता है। प्रोटोन और इलेक्ट्रोन तो क्रमशः +और—मूल्य के होते हैं जबकि न्यूक्लियस अथवा नाभिका का+या—दोनों में से किसी भी प्रकार का विद्युती प्रभाव (Electric Charge)नहीं होता। इसी प्रकार, आत्मा का भी एक अन्तर्तम (inner-most) भाव अथवा स्वभाव है जिसे आप आत्मा की धुरी, उसकी नाभिका, उसकी आवाज़ आदि नाम दे सकते हैं। परन्तु वास्तव में वह न्यूक्लियस अथवा नाभिका की तरह कोई अलग 'पदार्थ' अथवा 'सत्ता' नहीं है बल्कि स्वभाव-मात्र है। आत्मा अपनी प्रतिदिन की दिनचर्या में अच्छे (positive) और बुरे (negative) विचार या संस्कार भी अभिव्यक्त करती है, परन्तु यह जो अन्तर्तम स्वभाव है अथवा आत्मा का मूल है, यह इन दोनों से भिन्न, सदा पवित्र और शान्त है। जब आत्मा किसी बुरे कर्म की ओर प्रवृत्त होती है तो उसका यह अपना मूल—पवित्र एवं शांत—स्वभाव ही उसे इस प्रवृत्ति से बचकर रहने की सम्मति देता है। परन्तु यदि मनुष्य के संस्कार और उनके विचार काफ़ी बिगड़ चुके होते हैं तो वह इस चेतावनी की अवहेलना अथवा उपेक्षा कर देता है। इसी बात को लोग स्पष्ट करते हुए प्रायः कहा करते हैं कि "उसकी अन्तरात्मा ने तो उसे इस कर्म से रोका था परन्तु उस व्यक्ति ने उस आवाज़ को दबा दिया" अथवा "उस व्यक्ति ने अन्तरात्मा का गला घोंट दिया।" अब सच तो यह है कि अन्तरात्मा का कोई 'गला' तो होता नहीं है परन्तु भाव को प्रगट करने के लिए ऐसे वाक्यों का प्रयोग कर दिया जाता है। इसी प्रकार अन्तरात्मा भी आत्मा के अतिरिक्त दूसरा कोई पदार्थ नहीं है परन्तु आत्मा के ऊपरी-ऊपरी स्पष्ट भावों के अतिरिक्त उसके मूलभूत स्वभाव की ओर इशारा करने के लिए 'अन्तरात्मा' शब्द का प्रयोग किया जाता है।

चूंकि यह अन्तरात्मा अर्थात आत्मा का मूल स्वभाव पवित्र एवं शान्त है, इसलिए जब कोई साधक अपने मन को चहूं ओर से समेटकर अपने इस 'स्वरूप' में स्थित करता है तो उसे पवित्रता एवं शान्ति का अनुभव होता है। इसे ही वह अपनी अल्पज्ञता के कारण आत्मा में परमात्मा के वास का फल मान लेता है जबकि वास्तव में यह होती उसकी आत्मानुभूति है।

कुछ लोग इस अन्तर्तम स्वभाव के द्वारा जब महसूस करते हैं कि उनके बुरे संकल्पों को इसकी स्वीकृति नहीं मिल रही तो वे भ्रान्ति-वश यह मान लेते हैं कि परमात्मा ही उन्हें इस बुराई से बचने के लिए सुझाव दे रहा है। चूंकि वे यह समझते हैं कि उस समय उनका मन तो बुराई की ओर प्रवृत्त है, इसलिए उस बुराई से उनको रोकने वाला तो उससे अलग ही कोई होगा। और, वह निश्चित रूप से अच्छा ही होगा क्योंकि वह बुराई से रोकता है।

ऐसा सोचकर वे यह मान लेते हैं कि वह परमात्मा ही की 'आवाज़' थी जबकि वास्तव में वह उनके अपने ही मूल पवित्र स्वरूप की, अर्थात अन्तरात्मा की ही आवाज़ होती है जिसे कई लोग अंग्रेजी भाषा में 'कान्शेंस' (Conscience) भी कहते हैं।

जर्मनी के प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक अथवा मनो-विश्लेषक प्रोफेसर सिग्मंड फ्रायड ने इसे ही ऑल्टर ईगो (Alter Ego) का नाम दिया है। परन्तु वास्तव में ऑल्टर ईगो और कान्शेंस में अन्तर।

जब मनुष्य ईश्वरीय ज्ञान और योग की शिक्षा प्राप्त करता है और दिव्य गुणों की धारणा में लग जाता है तो उसकी अन्तरात्मा को बल मिलता है जिससे वह मनुष्य को बुरे कर्मों से रोकने में सफल होती है। इस बल को ही 'विवेक बल', 'मनोबल' (Will Power) आदि नाम दिया जाता है। यदि मनुष्य सतसंग नहीं करता, सदाचार की ओर नहीं बढ़ता, नैतिक शिक्षा नहीं लेता और योगाभ्यास नहीं करता तो उसका विवेक कुण्ठित हो जाता है अथवा उसकी अन्तरात्मा पर मानो पर्दा पड़ जाता है। वह इतनी दुर्बल हो जाती है कि उसकी आवाज़ क्षीण हो जाती है। उस स्थिति में वह या तो मनुष्य को बुराई की तरफ सतर्क या सचेत नहीं करती और या उसकी आवाज़ इतनी मन्द हो जाती है कि वे मन के तत्कालीन संकल्पों के वेग के बीच सुनाई नहीं देती। बुरे कर्म करने की आदत वाले लोगों के जीवन में ऐसा ही होता है। इसके विपरीत जो दिनोंदिन अच्छाई की ओर प्रवृत्त होते हैं, उनका मनोबल और अधिक बढ़ता है, उन्हें शुद्धि के लिए प्रवृत्त करता है अथवा रही-सही, छोटी-मोटी बुराई से निकलने की प्रेरणा देता है।

अन्तरात्मा के बारे में यह ज्ञातव्य बातें जानकर हमें चाहिए कि हम अपने पवित्रता और शान्ति के मूलभूत स्वरूप में टिकें, मनोबल को सुदृढ़ करें तथा अन्तरात्मा की आवाज़ सुनते हुए बुरी आदतों को छोड़ते चले जाएं। इस अन्तरात्मा का सम्बन्ध परमात्मा के साथ जोड़ने से ही उसकी शान्ति, शक्ति व पवित्रता में ऐसी वृद्धि होगी कि आसुरीयता एवं पवित्रता पर पूर्ण विजय होएगी। —जगदीश

पूना में स्मृति दिवस कार्यक्रम में ब्र० कु० लता जी सहज राजयोग का अनुभव करा रही हैं। मंच पर भ्राता शामकांत, भ्राता प्रो० पुरुषोत्तम वीरकर रिसर्चर एवं संस्कृतज्ञ, भ्राता नाना साहेब पाठक, अवकाश प्राप्त न्यायाधीश, भ्राता वसंतराव काणे सम्पादक दैनिक संध्या, ब्र० कु० बृजशान्ता, भ्राता जीवन किलोस्कर बैठे हैं

रायपुर सेवाकेन्द्र द्वारा टीटीलागढ़ में आयोजित आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन एस०डी०ओ० भ्राता जुगलकिशोर महापात्र जी द्वारा सम्पन्न हुआ। उद्घाटन से पूर्व सर्व शिव बाबा की याद में खड़े हैं। साथ में ब्र० कु० विमला तथा रेखा खड़ी हैं

अच्छाई और बुराई में अन्तर

लेखक—ब्र० कु० सुन्दरलाल, शक्तिनगर, देहली

कुछ लोगों को जब आहार, व्यवहार और आचार की शुद्धि के नियम का पालन करने के लिए कहा जाता है तो वे अंग्रेज़ी के एक वाक्य का उद्धरण देते हुए कहते हैं कि 'अच्छाई' और 'बुराई' में मूलत: कोई 'अन्तर' ही नहीं है, अन्तर केवल एक मनुष्य और दूसरे मनुष्य के सोचने के तरीके के कारण से दिखाई देता है—There is nothing good or bad, only thinking makes it so. आज संसार में एक ऐसी हवा-सी फैल गई है कि जब किसी शिक्षित व्यक्ति के व्यवहार में कोई आचार अथवा नैतिकता के विरुद्ध बात दिखाई देती है तो उस ओर उसका ध्यान खिचवाने पर वह तुरन्त कह उठता है—"आप इसे 'बुरा' क्यों कहते हैं? बुराई तो मनुष्य के अपने ही दृष्टिकोण की उपज है?" इस प्रकार के वाक्यों द्वारा वह अपनी बुराई के लिए आड़ बना-कर स्वयं को समाज की निगाह में अच्छा सिद्ध करना चाहता है। कम-से-कम वह अपने मन में तो ऐसा मान बैठता है कि अच्छाई और बुराई में कोई अन्तर नहीं है और कि उसके अपने आचरण में कोई बुराई नहीं है।

परन्तु इस वाक्य की ओट लेने की बात को उठा कर हमें देखना तो चाहिए कि क्या वस्तुत: कोई अन्तर है या नहीं। यदि अन्तर है तब तो यों ही लोग स्वयं को धोखे में डालते हैं।

एक उदाहरण

इस बात का निर्णय करने के लिए एक उदा-हरण को सामने रखना ठीक होगा। कुछ लोग जो मांसाहारी हैं, उन्हें जब यह कहा जाता है कि मांस खाना अच्छा नहीं है तो वे इसी वाक्य को उद्धृत कर देते हैं और मानते हैं कि उन्होंने अपने व्यवहार की पुष्टि में एक आकाट्य तर्क पेश कर दिया है। परन्तु क्या उनका ऐसा सोचना ठीक है?

इस विषय में सोचने की सबसे पहली बात तो यह है कि किसी बुद्धिमान लेखक, वक्ता या चिन्तक ने किसी अवसर पर जो बात कह दी उसके कथन को सार्वकालिक सत्य मान लेना अथवा उसके प्रसंग को हटाकर उसके वाक्य को शाश्वत सत्य मानना गोया अपने साथ भी धोखा करना है और उस व्यक्ति के साथ भी अन्याय करना है। इस बात के स्पष्टीकरण के लिए हम कुछ ही समय पूर्व एक प्रसिद्ध और बहु-चर्चित घटना को सामने रख लेते हैं। सेना के एक अधिकारी, चोपड़ा साहिब, के दो बच्चों (गीता और संजय) को बिल्ला और रंगा ने बर्बरता से मारा था। हम पूछते हैं कि क्या कोई उस हत्या के कर्म को 'अच्छा' कहेगा? सभी समाचार पत्रों में इस विषय में जो न्यायिक निर्णय छपते रहे, सम्पादक की डाक में प्राप्त हुए पत्र प्रकाशित होते रहे या इस विषय पर विशेष लेख छपते रहे, उनमें किसी ने भी तो इस वारदात को **'अच्छा'** नहीं कहा। सर्वोच्च न्यायालय ने भी उन्हें इसके लिए दण्डित करने का निर्णय दिया, भारत के राष्ट्रपति ने भी उनके लिए दण्ड में कोई रियायत नहीं की, जनता ने भी निराप-वाद रूप से इस कर्म को 'बुरा' कहा, यहां तक कि बिल्ला की मां ने भी इसकी भर्त्सना की और बिल्ला की मृत्यु होने पर उसके शव को भी वह लेने नहीं आई, न अन्त में वह उससे मिलने आई। इसी प्रकार रंगा के सम्बन्धियों ने भी यही कहा कि यह एक अच्छा व्यक्ति था परन्तु संग-दोष से यह 'बुरा' बन गया था। अत: हम पूछते हैं कि इस घटना को सामने रख कर कोई कह सकता है कि कार में दो मासूम बच्चों को

धोखा देकर ले जाना और फिर निर्जन स्थान पर उन निहत्थों पर वार करके उन्हें मौत के घाट उतारना 'बुरा' नहीं था ? हमें विश्वास है कि किसी सिर-फिरे व्यक्ति के सिवा कोई भी इसे 'अच्छा' कर्म नहीं मानेगा। तब भला उनकी वह दलील कि अच्छाई और बुराई तो विचार-भेद ही का परिणाम हैं, धराशायी हो जाती है ! **अतः हमें यह याद रखना चाहिए कि यह वाक्य हर परिस्थिति पर ठीक घटित नहीं होता। इस उक्ति के प्रयोग करने के अवसर अलग हैं, जहां किसी को दुःख देने या किसी की हत्या करने की बात सामने आती है, वहां यह तर्क ठीक काम नहीं करता।**

यह वाक्य किस अवसर पर उद्धृत किया जा सकता है ?

इस वाक्य का प्रयोग करने की परिस्थितियां अलग प्रकार की हैं। वे ऐसी हैं कि जहां केवल एक व्यक्ति और दूसरे व्यक्ति की 'पसन्द' में अन्तर होता है और किसी नैतिक नियम का उल्लंघन नहीं होता। उदाहरण के तौर पर मान लीजिए कि एक व्यक्ति अपने कोट के लिए कपड़ा ले आता है और उसका एक मित्र उसे कहता है—"अरे मित्र,यह कैसा कपड़ा लाए हो ? यह कोई रंग है ? आप भी कैसे आदमी हैं कि पैसा खर्च करके कबाड़ा घर में ले आए हो ! "—तो यह उसके मित्र का अपना विचार है। हरे रंग का कपड़ा खरीदने वाले को तो सुन्दर लगता था परन्तु उसके मित्र को सुन्दर नहीं लगता, इसीलिए वह उसे 'बुरा' कह रहा है। यहां 'अच्छाई' और 'बुराई' में शाश्वत अन्तर नहीं है बल्कि 'पसन्द' का अन्तर है और वह अन्तर दो व्यक्तियों के बीच दृष्टिकोण का या वैचारिक अन्तर मात्र है, उससे संसार को कोई हानि होने वाली नहीं है।

परन्तु मांसाहारी की जो बात उठाई गई थी, उसके प्रसंग में तो इस तर्क को पेश करना गलत है क्योंकि उसमें जीव-हत्या का प्रश्न सम्मिलित है। हम पूछते हैं कि—"जैसा गीता और संजय की हत्या करना एक बुरा कर्म था, क्या वैसे ही अन्य किसी मासूम जीव की हत्या करना पाप, अर्थात् बुरा कर्म नहीं है ? जैसे मानव सन्तति को जीवित रहने का अधिकार है, क्या पशु सन्तति को जीवित रहने का अधिकार नहीं है ? चूंकि पशु अपने पक्ष में कुछ बोल नहीं सकते, इसलिए उनकी हत्या करना एक दयनीय और घृणित कर्म करना नहीं है ? निष्पक्ष भाव से सोचा जाय तो यह एक बुरा ही कर्म है। निर्णय और न्याय करने के कार्य में निष्पक्ष भाव एक पहली शर्त हुआ करती है क्योंकि पक्षपात या स्वार्थ के कारण मनुष्य ठीक निर्णय नहीं कर सकता। अतः अपनी जिह्वा के स्वाद या पेट के पकवान का प्रश्न छोड़कर विचार करने पर तो यही कहना पड़ेगा कि यह 'बुरा' कर्म है ! अपना पेट भरने के लिए दूसरों की जान लेना, यह करुणा, दया, सदभावना, अहिंसा प्रेम, आदि सद्गुणों अथवा सद्व्यवहार के विरुद्ध है। यदि कोई पशु किसी मनुष्य की हत्या करता है तो हम उसे 'पशु' कहते हैं और उसके कर्म को कुकृत्य मानते हैं और यदि मनुष्य होकर भी कोई हिंसक पशु-जैसा कर्म करता है तो यह कहते हैं कि 'अच्छाई' और 'बुराई' में कोई अन्तर ही नहीं है ! यदि 'अच्छाई' और 'बुराई' में कोई अन्तर नहीं तो फिर मनुष्य और पशु के व्यवहार में क्या अन्तर है।

अतः अन्य पहलुओं को छोड़ भी दिया जाय तो मांसाहार सबसे पहले तो इसी बात के कारण बुरा है कि उस कर्म का आधार जीव-हत्या पर है जो कि एक अच्छा कर्म नहीं है।

इसी विषय में एक-दूसरे तरीके से भी विचार किया जा सकता है। वह ऐसे कि—पैसा कमाना तो कोई बुरी बात नहीं है परन्तु किसी को धोखा देकर, चोरी करके या डाका डाल कर पैसा कमाना निस्संदेह बुरा कर्म है। इसमें तो कोई विचारान्तर नहीं है। सभी देशों की सरकारों ने इसे अपराध माना है और दण्डनीय घोषित किया हुआ है। तो यद्यपि पेट पालने का अधिकार हरेक को है, दूसरे की जेब काट कर अपने पेट को भरने का अधिकार उसे नहीं है। इसी प्रकार मनुष्य को भोजन करने की तो पूरी छूट है, परन्तु किसी को मार कर अपना पेट भरना

यह कुकृत्य है। खाने की चीजें तो संसार भर में उसी प्रकार से बहुत हैं जिस प्रकार से कमाने के लिए तरीके बहुत हैं।

एक अन्य दृष्टिकोण से इस पर विचार

इस विषय में हमें यह भी देखना चाहिए कि कोई व्यक्ति किसी बात को 'अच्छा' और दूसरा उसी बात को 'बुरा' कहता है तो उसका आधार क्या है? उनके विचारान्तर का भी कोई तो आधार होगा ही। दोनों ही विचार सत्य और समतल तो हो नहीं सकते। उन विचारों के अन्तर के कारण की गहराई में जाने से ही मालूम हो जाएगा कि कौन-सी बात विवेक-सम्मत और अच्छी और कौन-सी बात विवेक-विरुद्ध और बुरी है। यों किसी न्यायालय में दो वकील भी तो अपनी-अपनी बात को ठीक सिद्ध करने का यत्न करते हैं। वे दोनों कानून की किताब से उद्धरण भी देते हैं, तर्क भी पेश करते हैं, गवाहों के बयान भी दिलाते हैं और अपनी बात को एक अच्छी-सी शब्द-रचना में भी प्रस्तुत करते हैं। परन्तु जज तो यह जानता ही है कि ये दोनों विरोधी पक्षों के वकील हैं और दोनों की बात सत्य और समतल तो हो नहीं सकती। इसी प्रकार किसी बात को यदि कोई अच्छा कहता है और दूसरा बुरा, तो निश्चय जानिए कि दोनों सत्य नहीं हो सकते। इसको सामने रखते हुए मानना होगा कि मांसाहार भी तो अच्छा होगा या बुरा—यह शाश्वत रूप से अच्छा नहीं हो सकता।

अब हमें यह देखना है कि मांस-पक्षी लोग प्रायः इस कारण से मांस का सेवन करते हैं कि उसमें प्रोटीन अधिक है अथवा उसमें अन्य भी पौष्टिक तत्व हैं। अब वास्तव में सोचने की एक बात तो यह है कि प्रोटीन तो सोयाबीन में भी हैं तब किसी की हत्या करने की क्या आवश्यकता है?

दूसरी बात यह है कि पाश्चात्य पद्धति के अनुसार जो वैज्ञानिक मांसाहार की प्रशंसा करते हैं उनका अध्ययन अथवा उनके प्रयोग तो एकांगी हैं। इस कारण से वे इसे अच्छा आहार मानते हैं। उनकी पद्धति में तो यह देखा जाता है कि किस पदार्थ से कितनी कैलोरी गर्मी पैदा होती है और उसमें कितनी प्रोटीन, खनिज पदार्थ, लवण शर्करा आदि-आदि हैं। अतः उस विचार से तो वे ठीक ही कहते हैं कि ये अच्छा है। परन्तु सबसे बड़ी आपत्ति तो यह है कि वे न तो इस पर नैतिक दृष्टिकोण से विचार करते हैं और न इस दृष्टिकोण से कि मनुष्य के तन के अतिरिक्त उसके मन पर इसका क्या प्रभाव पड़ता है क्योंकि उनके विज्ञान में इन पक्षों का अध्ययन हो नहीं होता। अतः जो व्यक्ति इस पदार्थ को बुरा मानता है, वह उसके नैतिक पक्ष और मन पर इसके उत्तेजनाप्रद प्रभाव को सामने रखकर बुरा कहता है और उस दृष्टिकोण से तो यह पदार्थ बुरा ही है। इसका निष्कर्ष यह हुआ कि एक वस्तु को यदि कोई एक व्यक्ति अच्छा और दूसरा बुरा कहता है तो हमें इस आधार पर उसे अच्छा नहीं मान लेना चाहिए कि मनुष्य मनुष्य में विचारान्तर तो हुआ ही करता है। बल्कि हमें उस बात पर विचार करना चाहिए कि दूसरा व्यक्ति उसे बुरा क्यों कहता है ताकि कहीं ऐसा न हो कि उसे अच्छा कहने वाला व्यक्ति उसके किसी एक ही पक्ष पर विचार करके अपना निर्णय दे रहा हो जबकि अन्य किसी महत्वपूर्ण दृष्टिकोण से विचार करने पर वास्तव में वह है बुरा।

इस विषय में हमें एक वृतान्त याद हो आता है। मुसलमानों के माननीय हज़रत अली, मोहम्मद साहब इस बात को ज़ोरदार तरीके से कहा करते थे कि आखिर एक दिन इस संसार का विनाश होगा। उस दिन खुदा सबके अच्छे और बुरे कर्मों का फैसला करेगा। जो अच्छे होंगे, उन्हें जन्नत मिलेगी और जो बुरे होंगे, उन्हें दोज़ख मिलेगा। उनके कहने का भाव यही होता था कि लोग बुराई से बच कर रहें। परन्तु कुछ लोग ऐसे थे जो कहते थे कि न तो कोई जन्नत है न कोई दोज़ख और न इस दुनिया का विनाश होगा और न कोई फैसला, बल्कि यह संसार तो सदा से चला ही आया है और चलता

हो रहेगा। तब हज़रत अली उनसे कहा करते थे कि अगर कोई जन्नत और दोज़ख़ नहीं है और कोई विनाश या फ़ैसला नहीं होने वाला, तो भी जो अच्छे इन्सान हैं, उनका तो उस समय कुछ बिगड़ेगा नहीं और अगर यह बात सच निकली कि जन्नत और दोज़ख़ हैं तो जो बुरे ठहराए जायेंगे, उनको तो दोज़ख़ मिलेगा ही गोया उनकी हानि तो होगी ही। अतः वे कहते कि इस बात को सामने रखते हुए भी पाप से बचना तो अच्छा ही हुआ।

इसी प्रकार हम कह सकते हैं कि अगर दुनिया में बुराई नाम की कोई चीज़ है तो उसको छोड़ने वाले का तो कुछ नहीं बिगड़ेगा परन्तु जो बुराई को बुराई न मानकर उसे भी कर लेता है, उसे तो हानि होगी ही। □

तिरुपति में आध्यात्मिक मेले का उद्घाटन टी०टी०डी० के प्रशासक अधिकारी भ्राता पी० वी० आर० के प्रसाद द्वारा सम्पन्न हुआ। साथ में ब्र० कु० सुन्दरी तथा अन्य ब्र० कु० भाई बहनें खड़ी हैं

गाज़ियाबाद में स्मृति दिवस के उपलक्ष्य में आयोजित कार्यक्रम में ब्र० कु० स्वदर्शन प्रवचन करते हुए। साथ में ब्र० कु० कमलेश, ऊमा जी बैठी हैं

अपनी कहानी कहती हुई अरावली की पर्वत मालाएँ

ब्रह्माकुमार भोपाल, माउण्ट आबू

एकदिन सूर्योदय से पूर्व, चन्द्र की मधुर मुस्कान में, अरावली पर्वत की दो लम्बी-चौड़ी शृंखलाओं के बीच, जब मैं अपने आश्रम की एक छत पर पहुँचा तो पर्वतों को स्पर्श करती, वीरता का रस समाये, शीतल पवन ज्यों ही मेरे तन को छूने लगी, मेरा मन भी उसके प्रभाव से शून्य न रहा। मन अतीत में खोने लगा। विभिन्न तरंगें मन में उभरने लगीं और मैं ऐसी स्थिति में पहुँच गया जहाँ मुझे मेरा व स्थान का भाव नहीं रहा। लोग इसे मग्न अवस्था भी कहते हैं और अव्यक्त स्थिति भी।

मेरे एक ओर उदयपुर की पहाड़ियाँ गौरव से सिर उठाये खड़ी थीं और दूसरी ओर आबू की पवित्र श्रेणियाँ जहाँ आज भी पवित्र वातावरण समस्त संसार के लिए प्रेरणा का केन्द्र है। पहले मेरा ध्यान उदयपुर की पहाड़ियों की ओर खिचा, मैंने भाव-विभोर होकर उनसे पूछा—कि अरी पहाड़ियो, तुम बहुत समय से अचल हो, बोलो तुमने क्या-क्या देखा है?

पहाड़ियों से मन को मोहने वाली, मन में वीर रस उदित करने वाली आवाज़ें आने लगीं कि हे सौम्य नर—मैंने वह सब कुछ देखा है जो तुमने सुना है……

मैंने रानी पद्मिनी का १३००० वीरांगनाओं सहित जौहर भी देखा, जिसने पापी अलाउद्दीन सहित समस्त संसार के हृदय को द्रवित कर दिया था, और भारत की पवित्रता व शीलता का ज्वलंत उदाहरण, मानव-जगत के लिए सदा के लिए उपस्थित कर दिया था। मैंने वीर हमीर की वीरताएँ भी देखीं और उनकी क्षमा शक्ति भी। मैंने राणा कुम्भा का आदर्श शासन भी देखा और उसकी धैर्यता भी। मैंने राणा सांगा के पराक्रम भी देखे और इसके सेनापति शिलादित्य की बगावत भी। मैंने महाराणा प्रताप की वीरता, त्याग, साहस और बलिदान भी देखे तो पन्ना धाय का देश के लिए अपने नव शिशु का बलिदान भी।

हे धर्म प्रेमी, मैंने यहीं से मेवाड़ के अनेक वीरों को हिन्दू धर्म की रक्षा के लिए सर्वस्व बलिदान करते देखा है। भामाशाह जैसे महादानियों को भी मैंने अपनी ही गोद में पाला है जिन्होंने हिन्दुत्व की रक्षा के लिए सर्वस्व न्यौछावर किया। मैंने ऐसे २ सपूतों को जन्म दिया जिनका नाम स्मरण करके, आज भी अनेक वीर, देश की आन पर बलिदान हो जाते हैं।

फिर अचानक ही मेरा मस्तक आबू की महान पर्वत श्रेणियों की ओर मुड़ गया और मैंने पूछा—हे तीर्थराज आबू—तुमने क्या-क्या देखा? उसने सिर हिलाते हुए उत्तर दिया, वत्स—जो तुमने देखा, वही मैंने देखा।

तुमने और मैंने यहीं पर निराकार भगवान् को और प्रजापिता ब्रह्मा को नवयुग की योजना बनाते देखा। तुम उस परम पुरुष की गोद में खेले और भगवान के अनेक बच्चे मेरी गोद में खेले और मैं भी उनके चरणस्पर्श से पवित्र हो गया। तुमने भी उसका दुलार पाया और मेरा भी कण-कण उसकी पावन दृष्टि से पवित्र हो गया। मेरी मिटी गरिमा मुझे पुनः प्राप्त हो गई।

तुमने भी देखा और मैंने भी—उस परम-सत्ता परमपिता को यहीं पर ब्रह्मा तन में उतरते। पतित नेत्र उसे नहीं देख सके, न देख सकेंगे। उसकी ज्ञान वीणा की तान तुमने भी सुनी और मैंने भी। उसकी मधुर आवाज़ ने मुझे धन्य-धन्य करके मेरा भी महत्त्व बढ़ा दिया।

मैंने यहीं पर उस परम सत्य, परमपिता परमात्मा को मनुष्यों को देवता बनाते देखा, शक्तियों में ज्ञान-बाण भरते देखा, मनुष्यों को अमृत पिलाते देखा। मैंने उस निराकार परमात्मा को ब्रह्मा-तन में बैठकर बच्चों के साथ खेलते भी देखा और खाते भी···

मैंने देखा—यहीं से दिव्य प्रकाश समस्त विश्व में फैल रहा है। यहीं से निकलो सुख-शान्ति की तरंगें मनुष्यों में नव जीवन का बीज डाल रही हैं। यहीं से निकली पवित्रता की किरणें मानव-मन में फैले हुए दूषित कीटाणुओं को नष्ट करती जा रही हैं।

मैंने क्या-क्या अचरज देखा? जिसे न ऋषि मुनि देख सके और न कलियुग के तर्क शास्त्री, विद्वान्। जिसे न तपस्वी देख सके और न पुजारी। मैंने भगवान द्वारा रचित रुद्र ज्ञान यज्ञ देखा और उससे निकलती विनाश ज्वाला भी। उसमें मनो-विकारों को स्वाह होते भी देखा तो उससे मनुष्यों को मन इच्छित फल प्राप्त करते भी।

मैंने भगवान को सम्पूर्ण सत्य का रहस्योद्घाटन करते भी देखा और असत्य का पर्दाफाश करते भी। मैंने यहाँ बड़े-बड़े विद्वानों को समर्पण होते भी देखा और महात्माओं को नतमस्तक होते भी। मैंने भगवान के हर चरित्र को देखा। भगवान के हर रूप को देखा। भगवान को अपने बच्चों में बल भरते भी देखा और वरदान देते भी।

और मैंने देखा कि यहीं से पुनः हिन्दू धर्म की रक्षा हो रही है। और हिन्दू धर्म अपने भूल स्वरूप, देवी-देवता धर्म में रूपांतरित हो जाएगा। मैंने देखा कि समस्त विश्व मेरी ओर खिचा चला आ रहा है, यहीं से सबको गति सद्गति का वरदान मिल रहा है, सबको दिव्य नेत्र प्राप्त हो रहा है, और यहीं से सबकी जन्म-जन्म की प्यास बुझ रही है।

तब मैंने देखा, मैं बैठा था। घड़ी ८.० बजा रही थी। और इन्हीं विचारों के परम आनन्दों को समाते हुए मैं नीचे उतर आया।

जूनागढ़ में १३ वें स्मृति दिवस कार्यक्रम में सम्बोधन करती हुई ब्र० कु० दमयन्ती जी, मंच पर ब्र० कु० इषा बहन तथा भ्राता परमानन्द भाई बैठे हैं। →

जेतपुर सेवा केन्द्र द्वारा संचालित उपलेटा गीता पाठशाला में दादी जी के पधारने पर स्वागत किया जा रहा है। ←

पढ़ाई, लड़ाई, चढ़ाई, कमाई

ब्र० कु० अशोक, विज्ञान भवन, आबू

जिस ईश्वरीय विश्वविद्यालय में स्वयं ईश्वर पढ़ाते हों, उस पढ़ाई से श्रेष्ठ अन्य कोई भी विद्या नहीं होती। यह पढ़ाई अति सरल परन्तु असाधारण है। इसकी गुह्यता को जानने के लिए आत्मा को अति पवित्र व योग-युक्त होना पड़ता है। इस पढ़ाई से सबसे बड़ी डिगरी प्राप्त होती है—वह है सम्पूर्णता की डिगरी। जिसका प्रमाणपत्र स्वयं भगवान ही देते हैं। यहाँ कदम-कदम पर पेपर होते हैं व नम्बर जमा होते हैं। इस पढ़ाई के चार विषय हैं—ज्ञान, योग धारणा व ईश्वरीय सेवा। अन्त तक चारों ही विषयों में सम्पूर्ण पास होने वाले अष्ठ रत्न बनते हैं। यह पढ़ाई सम्पूर्ण ब्रह्मचर्य में ही पढ़ी जा सकती है।

वैसे तो पढ़ाई में लड़ाई नहीं होती। परन्तु इस पढ़ाई में माया से घोर संघर्ष होता है। योग के अभ्यास में रावण दुश्मन अनेक व्यवधान उत्पन्न करता है। परन्तु हमारा सेनापति स्वयं सर्व शक्तिवान है। इसके नेतृत्व में हमारी जीत निश्चित है। जब दो राजाओं के बीच युद्ध होता था तो कितनी सम्पत्ति व सेना नष्ट होती थी और मिलता था मृग-तृष्णा समान छोटा सा राज्य। परन्तु हमारे इस युद्ध में न कोई खर्च है, न नुकसान। और इस युद्ध में विजय पाने पर एक तो हम विजयी रत्न घोषित होंगे दूसरे भविष्य में हमें स्वर्ग का विश्व-महाराजन का पद प्राप्त होगा। जैसे युद्ध में हथियार व कवच होते हैं, इस अलौकिक युद्ध में भी ज्ञान के अनेक हथियार हमारे पास हैं "अशरीरी स्थिति हमारा कवच है जो माया के हर वार से हमें सुरक्षा प्रदान करता है। हमारी यह लड़ाई बड़ी गुप्त है।

इसी के साथ-साथ हमारी ये बड़ी ऊंची चढ़ाई है। वैज्ञानिक भी चन्द्रमा तक चढ़ाई करते हैं, उसके लिए उन्हें कितनी तैयारी व खर्च करना पड़ता है व यात्री को कितना सहन करना पड़ता है। हमारी ये चढ़ाई परमधाम की है जो कि सूर्य चाँद व तारों से भी दूर है। जैसे-जैसे हम अपने उस घर परमधाम की ओर चलते हैं तो हमें पहाड़ी की चढ़ाई की तरह अनेक तूफ़ानों का सामना करना पड़ता है। जैसे ऊपर जाने से नीचे की चीज़ें छोटी दिखती हैं, वैसे ही जैसे-जैसे हमारी ऊँची स्थिति होती है, सभी सांसारिक घटनाएँ हमें छोटी लगने लगती हैं। हमें मालूम है कि जब हम अपनी मंज़िल पर पहुंच जाएँगे तो हमें बहुत ही सुख व आराम होगा।

इसी के साथ-साथ हमारी हर कदम में कमाई ही कमाई है। संसार में लोग कमाई के पीछे कितने व्यस्त हैं, कितने पाप करते हैं और कितने परेशान रहते हैं। परन्तु हमारी यह अलौकिक कमाई कितने पुण्य की है। इसमें हम कितने सरल चित्त रहते हैं। जब हम भगवान की श्रीमत पर चलते हैं तो असंख्य रत्न पाते हैं। जब ज्ञान रत्न दान करते हैं तो पदमों की कमाई होती है। हर श्वास व हर सेकिंड योग-युक्त रहने से बखुद कमाई जमा होती है। भटकती आत्माओं को राह दिखाने से, अशान्त आत्माओं को शान्ति देने से हमारे खज़ाने भरपूर हो जाते हैं। आज कल तो मनुष्य रात-दिन कमाने पर भी गुजारा नहीं कर पाते। परन्तु हम इस थोड़े से संगमयुग में ही इतनी कमाई जमा कर लेते हैं जो हमें भविष्य २१ जन्म अथाह सुख-शान्ति व सम्पत्ति प्राप्त हो जाती है और वहाँ हमें कुछ भी कमाने की आवश्यकता नहीं पड़ती।

इस प्रकार हमारा यह भगवान द्वारा स्थापित किया हुआ ईश्वरीय विश्वविद्यालय है जिसमें ईश्व-

रीय पढ़ाई के साथ माया से युद्ध भी है, ऐसा युद्ध जिसके बाद २५०० वर्ष तक कोई युद्ध नहीं होता। सर्वोच्च चढ़ाई भी है—जहाँ पहुँच कर पीछे हम नर्क में नहीं लौटते और हर कदम में कमाई है। कितनी भाग्यशाली हैं वे आत्माएँ जिन्हें ये परम सौभाग्य प्राप्त हुआ है।

"आओ मिलकर झूम उठें हम"

(विजयकुमारसिंह, बनमनखी)

—:०:—

आओ मिलकर झूम उठें हम, गाएँ खुशी के गीत—२
मनो-कामना पूरी हुई अब, मिल गया मन का मीत—हमें—२
सुन करके अपनाया हमने, सच्चे गीता ज्ञान को,
'संगम' पर पहचान लिया है, 'शिव' प्यारे भगवान को,
'आत्मा'—निश्चय किया अपने को, छोड़ा देह-अभिमान को,
आत्मस्वरूप में भाई-भाई, तज के झूठी शान को,—२
देहधारी कोई याद न आए, 'शिव' से की है प्रीत—२

ब्रह्मा-वत्सों को योग सिखाने, शिव 'परमधाम' से आते हैं,
योगी और पावन बनने का, आकर ज्ञान सुनाते हैं,
'सृष्टि-चक्र' फिरता कैसे, ये भी 'वो' समझाते हैं,
योगी और पावन बनकर हम, 'देव-पद' फिर पाते हैं,
निर्भय 'ओ' निर्विकारी बनें हम, पाई माया पर जीत—२

अब सोने का समय नहीं है, वक्त आखिरी आया है,
नई दुनिया की स्थापना हेतु, अविनाशी-यज्ञ रचाया है,
इसमें कुछ भी नया नहीं, ये 'ड्रामा' बना बनाया है,
सिकिलधे बच्चों को देखकर, परमपिता हर्षाया है,—२
सम्पूर्ण विकारों की दे आहुति, हम बनेंगे विक्रमजीत···हमतो—२

रीवा में आध्यात्मिक प्रदर्शनी में अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय के उपकुलपति भ्राता आनन्द गोपाल शर्मा को सपरिवार समझाते हुए ब्र० कु० शैलमा

टेढ़ी खीर नहीं, स्वादिष्ट एवं पौष्टिक खीर

ब्र० कु० चक्रधारी, देहली

नन्हें मुन्नो, ओम शान्ति ! बोलो, हम लायेंगे विश्व में आध्यात्मिक क्रान्ति ! !

अच्छा, आप बच्चों को खीर तो अच्छी लगती ही होगी और अपने इस पृष्ठ का शीर्षक पढ़कर आप समझ ही गये होंगे कि इस मास की कहानी खीर ही से सम्बन्धित है। आपका अन्दाज़ा ठीक ही है। गोया आप लाल बुझक्कर बन गये हैं। लो अब यह है कहानी—

एक सूरदास को किसी मित्र ने अपने पास न्योता दिया। दोनों बचपन में इकट्ठे एक ही मुहल्ले में रहते थे। बेचारे गरीब बालक सुलोचन को किसी कारण से अस्वस्थता हुई और उसकी निगाह हमेशा के लिए जाती रही। कुछ ही समय के बाद उसका मित्र महेश अपने पिता जी के स्थानान्तरण के कारण उससे दूर चला गया। अब काफ़ी समय के बाद जब संयोग-वश वे दोनों परस्पर मिले तो महेश ने सुलोचन के प्रति स्नेह प्रगट करते हुए कहा—"प्रिय सुलोचन, हम बहुत दिनों के बाद मिले हैं। हम बचपन के साथी हैं। अभी मैं इस नगर में कई वर्षों के बाद वापस लौट आया हूं। क्या ही अच्छा हो कि आने वाले रविवार को आप भोजन हमारे यहां करो! देखो सुलोचन, मना न करना !

सुलोचन का मन हर्ष से भर गया। अपने पुरातन सखा के प्रेम के शब्द सुन कर उसके नैन गीले हो उठे। भाव-विभोर होकर उसने कहा—महेश मैं आपके यहां अवश्य आऊंगा।

महेश सोमवार की इन्तज़ार करने लगा। उसने घर में कह दिया था कि उस दिन विशेष भोजन बनाया जाय क्योंकि उसका एक बचपन का दोस्त, सुलोचन, जिसके प्रति उसे स्नेह भी है और सहानुभूति भी, आने वाला है। उधर सुलोचन को भी याद था कि उसे सोमवार महेश के यहां जाना है। महेश ने घर में उस दिन अपनी प्रिय चीज़ 'खीर' बनाने के लिये कह दिया था।

आख़िर सोमवार आ गया। सुलोचन महेश के घर पर पहुंचा। महेश ने उसका स्वागत किया। उसके घर वालों ने भी उसके आगमन पर हर्ष प्रगट किया। अपनी आवभगत को देखकर सुलोचन भी अपने मित्र के सद्व्यवहार पर प्रसन्न हो रहा था। दोनों मित्र अब परस्पर बातचीत कर रहे थे और हंस रहे थे। बात ही बात में महेश ने सुलोचन को बताया कि आज अन्य पदार्थों के अतिरिक्त उसके लिये खीर भी बनाई गयी है। गरीब सुलोचन का तो गुजारा ही मुश्किल से होता है। दोनों समय पेट-भर रोटी खाना भी वह अपने लिये सौभाग्य मानता था। अतः उसे तो आश्चर्य हो रहा था कि महेश ने उस गरीब की मित्रता कैसे याद कर ली। सुलोचन

ने खीर तो कभी खाई ही नहीं थी। अत: जब महेश ने खीर का नाम लिया तब उसने पूछ ही लिया कि खीर कैसी होती है।

सुलोचन ने कहा—"महेश, खीर! खीर कैसी होती है?"

महेश—"सफ़ेद होती है सफ़ेद!"

सुलोचन—सफ़ेद कैसा होता है? (बचपन में ही नेत्रहीन होने के कारण सुलोचन को सफेद रंग का आभास नहीं था।)

महेश—सफ़ेद बत्तख की तरह होता है।

सुलोचन—बत्तख? बत्तख कैसी होती है? (सुलोचन ने बत्तख भी नहीं देखी थी।)

महेश ने अपने एक बाजू को कोहनी से कुछ मोड़ कर उस पर सुलोचन का हाथ पकड़ कर पूरे बाजू पर फेर दिया। सुलोचन कन्धे से लेकर कोहनी तक और फिर कोहनी से कोण बनाते हुए मुड़ा हुआ हाथ अपने हाथ से टटोलते हुए देखा।

सुलोचना बोला—अरे भाई, क्या खीर ऐसी टेढ़ी होती है? दोस्त, माफ़ करना, मैं ऐसी टेढ़ी खीर नहीं खाऊंगा, वह मेरे गले में अटक जायेगी। यह कह कर उसने खीर खाने से इन्कार कर दिया और आखिर खीर नहीं खाई।

तो बच्चों, देखो, पदार्थ को जानने तथा ठीक न समझने के कारण सुलोचन ने अपने प्रिय मित्र के यहां खीर खाने से इन्कार कर दिया। महेश ने उसे समझाने की बहुत कोशिश की परन्तु अब सुलोचन अड़-सा गया और बोला—महेश, इस टेढ़ी खीर की बात को तो अब छोड़ ही दो! महेश ज्यों ही उसे समझाने लगता कि खीर वास्तव में टेढ़ी नहीं है त्यों ही सुलोचन बात को बीच में ही काटते हुए कहता—"नहीं, नहीं, मैं नहीं खाऊंगा।" उसने यह भी नहीं सोचा कि महेश तो मेरा शुभ-चिन्तक है और उसने मुझे प्यार से निमन्त्रण दिया है; वह मुझे खाने के लिये ग़लत चीज़ कैसे देगा।

बच्चो, इसी प्रकार, जब हम कई बार किसी को स्नेह से निमन्त्रण देते हैं तो उसे हम ज्ञान का रूप अमृत भी देना चाहते हैं। परन्तु वह उसे भी 'टेढ़ी खीर' मान कर प्राप्त करने से इन्कार कर देता है। वह संसार-भर की दूसरी बातें करने के लिये तो तैयार हो जाता है परन्तु ईश्वरीय ज्ञान की चर्चा को गले में अटकाने वाला मान कर उस चर्चा से इन्कार कर देता है। वह यह भी नहीं सोचता कि यह हमारे मित्र हैं, तब भला यह हमें कोई हानि-कर चीज थोड़े ही देंगे। आज संसार में सुलोचन ही अधिक मिलेंगे। ऐसे लोगों पर दया आती है कि जैसे सुलोचन उस स्वादिष्ट एवं पौष्टिक खीर को, जिसमें किशमिश, चिलगोज़े, बादाम, नारियल की गिरी, केसर, इलायची आदि-आदि मिले हुए थे, खाने से वंचित रह गया था, वैसे ही यह लोग भी ज्ञान रूपी अमृत से, जो कि आत्मा को पवित्रता, शान्ति, आनन्द और ईश्वरीय प्रेम प्राप्त कराने वाला है, से वंचित रह जाते हैं। उनकी इस हानि को सामने रखते हुए आप सदा यह ध्यान में रखना कि अगर बहन जी आपको ज्ञान, योग या दिव्य गुणों की कोई बात बतायें तो उसे 'टेढ़ी खीर' मान लेना वरना उससे आप भी वंचित रह जाओगे। आप उसे आत्मा के लिये हितकर एवं शक्तिदायक मान कर उसे प्राप्त कर लेना। □

इलाहाबाद में अव्यक्त दिवस कार्यक्रम में उपस्थित (बाएं से) मंच सचिव ब्र० कु० मनोरमा, ब्र० कु० दमयन्ती, भ्राता एस० डी० बागला (आयुक्त इलाहाबाद) तथा ब्र० कु० कमला बहन

सतयुग और समय

ब्र० कु० रमेश, गामदेवी, बम्बई

काल को त्रिकाल कहा जाता है अर्थात भूत, वर्तमान और भविष्यकाल। इस प्रकार से तीन परिस्थिति और स्थिति में काल का विभाजन हुआ है और यह तीनों ही स्थितियां सदा के लिए स्थिर नहीं हैं। हर समय उसमें परिवर्तन होता है। आज का वर्तमानकाल कल भूतकाल बनेगा और आज का भविष्यकाल कल का वर्तमान और परसों भूतकाल बनेगा। समय यह तीन परिस्थितियों या स्थितियों को जोड़ने वाली रेखा है। एक चित्र में यदि एक ही पंक्षी की उठने की तीन स्थितियां दर्शाई गई हों तो इन स्थितियों की व्याख्या इस प्रकार होगी—बीच का चित्र है वर्तमान, पीछे का चित्र भूतकाल और अंत का चित्र है भविष्यकाल और तीनों को जोड़ने वाला है समय। ये तीनों स्थान कितने समय में बिताए (Pass) यह बताने वाली वस्तु है गति। कई लोग समय और गति को एक ही समझते हैं और इसी कारण वे लोग उसे समय की गति कहते हैं। हिमालय से निकलने वाली गंगा, जब वह पटना पहुंचती है तब हिमालय उसके लिए भूतकाल है, पटना वर्तमानकाल है और कलकत्ता आदि स्थान भविष्यकाल है। तीनों को बांधने और जोड़ने वाली है समय सरिता और गंगा नाम की यह सरिता आदि से अन्त तक एक है। गंगा को स्वयं का भूत, भविष्य या वर्तमान नहीं क्योंकि वह नदी सभी स्थानों पर है। परन्तु उसके अन्दर जो पानी है उसको भूत-भविष्य और वर्तमान है। समय का बंधन गंगा को नहीं है, वह सतत है। परन्तु उसको बनाने वाले अनेक बिन्दु रूपी नीर, उनका बहना, आगे बढ़ना यह काल का प्रतीक है। गंगा को समय का बन्धन नहीं किन्तु बिन्दु रूपी पानी को समय का बन्धन है, यह बात तो सभी मानते हैं। परन्तु क्या समय का यह स्वरूप सत है? समय के सत स्वरूप को समय से ऊपर जाकर ही समझना पड़ेगा।

विज्ञान ने जल-चक्र (Water-Cycle) के सिद्धान्त को माना है। इस सिद्धान्त के अनुसार समुद्र का पानी सूर्य-किरणों की गर्मी के कारण बादल बनता और हवा के झोकों के कारण बादल उड़ते-उड़ते पहाड़ों के प्रति जाते हैं। शीतलता के कारण फिर से पानी का स्वरूप बनकर यही बादल वर्षा के रूप में बरसते हैं। फिर हिमालय जैसे पहाड़ों से पानी नीचे आकर, फिर समूह रूप में नदी का रूप धारण करता है और अन्त में सागर में जाकर मिलता है। इस प्रकार यह चक्र चलता ही रहेगा (चक्र की इस बात को आगे (refer) वर्णन करेंगे)। तो प्रश्न है कि जब पानी का चक्र चलता ही रहना है और वह पटना पर स्थित पानी भविष्य में समुद्र में जाकर मिलेगा और फिर बादल बनकर उड़ेगा, हिमालय पर जाएगा, तो फिर समय रूपी चक्र की इस गति के सिद्धान्त अनुसार हिमालय वह जल-बिन्दुओं का सिर्फ भूतकाल नहीं परन्तु भविष्यकाल है अर्थात् जल के लिए हिमालय सिर्फ भूतकाल नहीं परन्तु भविष्यकाल भी है। यही भूतकाल फिर भविष्यकाल भी है यह कैसे मालूम पड़ा? जब जल-चक्र का ज्ञान हुआ। अर्थात् जल-चक्र को जानने से समय की पहचान मिली कि आज का भूतकाल उस पानी के लिए भविष्यकाल भी है क्योंकि उसे फिर वहां पहुंचना ही है। इस तरह विशेष ज्ञान से यह ज्ञात हुआ कि सिर्फ़ गंगा स्वरूप से गंगा सत नहीं परन्तु पानी के रूप से भी यह सत है क्योंकि उस पानी के लिए हिमालय, पटना और कलकत्ता तीनों स्थान सत है अर्थात तीनों स्थानों पर वह परिभ्रमण करता है। जैसे समय की सत्यता की पहचान पानी के चक्र को जानने से मिलती है उसी तरह अन्य सभी चक्र को जानने से मिलती है। अर्थात् गंगा और गंगा का पानी जैसे सत है वैसे अन्य सभी प्रकृति की चोजें सत हैं क्योंकि व्यक्ति रूप से उन सबका जो आज का भूतकाल है वह फिर कल का भविष्यकाल बनेगा प्रकृति के सत स्वरूप का ज्ञान विज्ञान देता है उसी

तरह आत्मा के सत स्वरूप का ज्ञान परमात्मा देते हैं। जैसे प्रकृति सत है उसी तरह से आत्मा भी सत है। इन दोनों का सत स्वरूप परमपिता परमात्मा बताते हैं और उसी रूप में स्थित करते हैं। इसी कारण समय का सम्बन्ध सत से है अर्थात् समय सिर्फ भूतकाल भी नहीं परन्तु भविष्य भी है। अर्थात समय यदि सत है तो आदिकाल सिर्फ भूतकाल नहीं परन्तु भविष्य रूप से भी सत है और इसी कारण आदि-काल को सत-काल या सत-युग कहा गया है। सत-युग इस तरह काल की गिनती के आधार पर सत है अर्थात् समय का यह सत्य स्वरूप चौथा रूप (Fourth dimension) सिर्फ परमपिता परमात्मा ही बता सकते हैं क्योंकि वे समय से अतीत हैं। जैसे पानी का सत स्वरूप, पानी से ऊपर होने के कारण, हमें मालूम पड़ा उसी तरह इस सृष्टि से जो अतीत है वही सष्टि के सत स्वरूप का ज्ञान दे सकता है। त्रिकाल को हम जानते थे परन्तु इस समय के चौथे रूप (Fourth dimension) को जानने से चतुर्विध समय को हम जान सकेंगे। समय के इस चतुर्विध स्वरूप का ज्ञान आज तक दुनिया में किसने नहीं बतलाया। किसी भी धर्मशास्त्र या अन्य पुस्तकों में यह नहीं लिखा है कि भूतकाल ही फिर से भविष्यकाल होगा और चक्र के सिद्धान्त अनुसार यह काल-चक्र फिरता रहेगा। There is nothing like absolute time, there is only relative time अर्थात् समय को सम्बन्ध का बन्धन है और इस बन्धन से अतीत ऐसा कोई समय नहीं।

इस लेख में पहिले चक्र की बात पर विचार किया गया कि पानी चक्र के रूप में आगे-पीछे घूमता है परन्तु चक्र के रूप में सत है और अनादि है। परन्तु यदि कोई प्रश्न पूछे कि उस पानी के अब तक कितने चक्र हुए होंगे। क्या इसकी गिनती हो सकती है? जल पानी के रूप में सत्य है और चक्कर के रूप में स्थान परिवर्तन को पाता रहता है परन्तु आखिर भी कितने चक्कर हुए यह वैज्ञानिक या अन्य कोई भी बतला नहीं सकेगा। ऐसे ही इस सृष्टि रूपी चक्र का कोई हिसाब नहीं निकाल सकेगा क्योंकि है ही यह चक्कर। चक्कर सत है क्योंकि उसे समय का बन्धन नहीं है।

सृष्टि की रचना के बारे में अनेक मत हैं। सृष्टि की उत्पत्ति कैसे हुई उसके बारे में विज्ञान ने अनेक विचार प्रस्तुत किए हैं। बिग-बेंग (Big-Bang theory) का सिद्धान्त, अनेक कणों के द्वारा (Nebular theory) उत्पत्ति इत्यादि अनेक विचार हैं। परन्तु प्रश्न है कि मान्यता के रूप में कौन-सी बात अच्छी है? भूतकाल में कोई एक दिन सृष्टि की रचना हुई होगी और भविष्य में एक दिन खत्म हो जाएगी ऐसा मानने से एक समस्या आती है कि यह मानना पड़ेगा कि उसी एक दिन से समय अर्थात् काल का प्रारम्भ हुआ और उसके पहिले समय या काल का अवकाश अर्थात शून्य था और अन्त में फिर काल या समय शून्य बन जाएगा अर्थात् काल खत्म हो जाएगा। सृष्टि की आदि के बारे में सोचने से समय के आदि का भी प्रश्न उपस्थित होता है। समय यदि अनादि है तो फिर सृष्टि को क्यों नहीं अनादि समझें?

सृष्टि और समय दोनों को असत समझने से अर्थात् समय का आदि और अन्त मानने से पहिले भी शून्य और अन्त में भी शून्य मानना पड़ेगा परन्तु चक्र रूप से सृष्टि सत्य स्वरूप जानने से इस शून्य काल को स्थान नहीं मिलेगा अर्थात् शून्य ही शून्य बन जाएगा। तो क्यों नहीं समय के इस सत स्वरूप को पहचान कर सृष्टि के सत स्वरूप को पहचान लें। जैसे वह समस्या है कि पहिले मुर्गी थी या अन्डा, बीज या वृक्ष, ऐसे ही यह समस्या है कि पहिले कौन बना—समय या सृष्टि? समय के कारण सृष्टि बनी या सृष्टि ने समय को जन्म दिया?

अब हम इस काल के चतुर्थ स्वरूप को जान गए हैं कि समय चक्र के रूप में फिरता है उसी कारण सृष्टि के तत्वों का चक्र रूप में फिरना हम जान गए हैं। नदी, नदी के रूप में सदा सत है परन्तु उसके जल के चक्र रूप में घूमना होता है—भूत, वर्तमान भविष्य फिर भूत वर्तमान भविष्य बनेगा। ऐसे ही

शेष पृष्ठ ४८ पर

परमात्मा शिव द्वारा 'आर्य' और 'अनार्य' का स्पष्टीकरण

ब्र० कु० रामऋषि, लखनऊ

विद्वानों ने ऐसा भ्रम फैला रखा है 'कि भगवान शिव अनार्य देवता हैं।' निसन्देह यह एक मिथ्या मान्यता है और इसकी पृष्ठभूमि में इतिहासविदों की यह भ्रान्त तथा मिथ्या धारणा विद्यमान है कि, आर्यजन बाहर से आकर भारत भूमि पर बसे।'

विगत दशकों में यह भ्रम काफ़ी हद तक दूर हो चुका है कि आर्यजन बाहर से आये। आर्यों के विदेशी होने की जो बात कभी बड़े ज़ोर-शोर से कही जाती थी वह ठण्डी पड़ चुकी है—उसकी वाणी शांत तथा मौन हो चुकी है।

आधुनिक युग में हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ कविस्वः जयशंकर 'प्रसाद' ने दशकों पूर्व भारत का गौरव-गान करते हुए अपनी एक कविता में इस प्रकार लिखा था। "हमारी जन्मभूमि थी यही, कहीं से आये थे हम नहीं।" अथर्ववेद के पृथिवी सूक्त में और अन्य वैदिक ऋचाओं तथा मंत्रों में जिस रागात्मकता और विह्व-लता के साथ भारतभूमि की प्रार्थना-वन्दना की गयी है उस कोटि की वन्दना विदेश से आकर भारत में बसने वाले लोग कदापि नहीं कर सकते थे। वैसी प्रार्थनाएं तो ऐसे जन ही कर सकते हैं जिनकी जाति यहाँ की मूल निवासिनी हो। इस सन्बन्ध में यह भी नहीं विस्मृत करना चाहिए कि वैदिक प्रार्थनाओं का स्वरूप भारत को विश्व रूप में ही निरूपित करता है। वैदिक मान्यता के अनुसार, भारत का तात्पर्य ही होता है विश्व की वसुन्धरा।

वैदिक वाङ्मय में देवता और असुर भाई-भाई के रूप में भी वर्णित हैं। अदिति को देवों की माता और दिति को असुरों की माता कहा गया है।ऐसा भी कहते हैं कि देव ही आर्य हैं और उन्होंने अपने शत्रुओं को दस्यु किंवा अनार्य की संज्ञा से सम्बोधित किया है। इन दोनों मान्यताओं से दो स्पष्ट मत बनते हैं। देवों और असुरों के एक ही मानव-कुल से उत्पन्न होने की बात यह प्रमाणित करती है कि देवता किंव, आर्य बाहर से आने वाले लोग नहीं रहे हैं। दूसरे 'कृण्वन्तों विश्वमार्यम्' वैदिक आदर्श के अनुसार, यह सिद्ध होता है कि एक ही जाति से जो लोग देव स्व-भावी और श्रेष्ठाचार बने उन्होंने अपने समय के समूचे मानव समाज को हीन से श्रेष्ठ और निम्न से उच्च बनाने का सफल अभियान चलाया।

वस्तुतः भगवान शिव वे देवाधिदेव हैं, जिनके निकट आर्य और अनार्य का कोई भेद नहीं है। अपने परमात्मा-स्वरूप में भगवान शिव हमारे इस सृष्टि-जगत में एक विशिष्ट भूमिका का निर्वाह करते हैं, और यह वैदिक साहित्य तथा शैव दर्शन से भी भली-भांति प्रमाणित हो जाता है। यह सर्वमान्य है कि अपने निराकारी ज्योतिर्लिङ्गम् स्वरूप में भगवान शिव सृष्टि-जगत में संहार-सृजन-परिपालन की परम श्रेष्ट किंवा दिव्य भूमिका निर्वाह ब्रह्मा-विष्णु-शंकर नामक त्रिदेवों के माध्यम से सम्पन्न किया करते हैं। मानव-जाति को सम्पूर्णतः अनार्य से आर्य बनाना ही परमात्मा शिव का विशिष्ट कर्त्तव्य है, और यह परम श्रेष्ठ कार्य वह त्रिदेवों के माध्यम से इस प्रकार सम्पन्न करते हैं कि ब्रह्मा द्वारा नयी दैवी सृष्टि की स्थापना हो जाती है, शंकर द्वारा पुरानी आसुरी सृष्टि का विनाश हो जाता है और विष्णु द्वारा नयी दैवी किंवा आर्य संस्कृति की परिपालना का पथ प्रशस्त हो जाता है।

पौराणिक गाथाओं के सन्दर्भ में यदि प्रागैति-हासिक काल के देवों और असुरों के कार्य-कलाप पर विचार किया जाय तो यह तथ्य ततोधिक स्पष्ट हो

जाता है कि जातियों जैसी कोई बात वस्तुतः है ही नहीं। कल्पान्त में और कल्पारम्भ में सृष्टि के प्रलय के समय और नव सृजन के समय भी मानव जाति एक ही मानव-परिवार के रूप में वर्णित और चित्रित है। इस सृष्टि से विचार करने पर यह मत ततोधिक ग्राह्य एवं तर्कसम्मत हो जाता है कि एक ही मानव परिवार कभी देव है और कभी असुर है, और दैवी सम्प्रदाय के आसुरी सम्प्रदाय का रूप ग्रहण कर लेने पर उसे आसुरी से दैवी बनाने का परमपावन कार्य परमात्मा शिव पुनः-पुनः सम्पन्न किया करते हैं। आसुरी सम्प्रदाय को दैवी सम्प्रदाय में रूपान्तरित करने वाले परमप्रभु के रूप में निस्सन्देह, भगवानशिव अनार्यों या असुरों के भी इष्ट तथा आराध्य हैं, किन्तु इस इष्टता-आराध्यता की महिमा और गरिमा भी इस मूल तथ्य में है कि वह अनार्यों को आर्य बना दिया करते हैं।

वैदिक भाषा में देवता और असुर वस्तुतः गुण-वाचक नाम हैं, न कि जातिवाचक। प्राचीन साहित्य में इस प्रकार के आदर्श बार-बार निरूपित किये गये हैं कि सम्पूर्ण विश्व एक इकाई है और सम्पूर्ण मानव जाति एक ही परिवार हैं। प्राचीन कथाओं की एक-रूपता और एकात्मकता सृष्टि-जगत तथा मानव-समाज की एकात्मकता को भली-भांति प्रमाणित कर देती है। सारांशतः, ये कथाएं और ये विवरण मानव-जाति को आर्य जाति और अनार्य जाति के रूप में नहीं विभाजित करते और यदि ये कुछ विभेद प्रस्तुत भी करते हैं तो इसी रूप में कि प्रारम्भ काल में जो प्रबुद्ध और उन्मिष्ट प्रज्ञा वाले जन श्रेष्ठाचारी किंवा आर्य बने। उन्होंने मानव-समाज के शेष लोगों को अनार्य से आर्य बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

प्राचीन काल की धर्म-विजय निश्चित रूप से शस्त्र बल की विजय नहीं रही है। विवरणों से पता चलता है कि आर्यजन प्रारम्भ-काल में मानव-सुधार के 'मिशन' (सत्यप्रचार कार्य) पर निकल जाते थे, और ऐसे श्रेष्ठ-सदाचारी जीवन का आदर्श प्रस्तुत करते थे कि अन्य लोग स्वतः-स्वेच्छया उनके श्रेष्ठ धर्म में दीक्षित हो जाते थे—उनके अनुयायी और अनुगामी बन जाते थे। वास्तविक धर्म-प्रचार को शस्त्र-बल या धन-बल की कभी भी अपेक्षा नहीं रही है और इन दशकों में अमरीका जैसे देशों में भारत के धर्म-प्रचारकों को जो अपूर्व और विलक्षण सफलताएं मिली हैं उनसे भी उपर्युक्त कथन की सम्यक् रूप से पुष्टि होती है। धर्म वस्तुतः एक श्रेष्ठ आचरण-विधान है, जब कि अधर्म वस्तुतः निम्न प्रकार की जीवन शैली है, और श्रेष्ठ आचरण का प्रचार-प्रसार तो अपने-आप सम्पन्न होता है क्योंकि उसका बल अन्य सभी सांसरिक 'बलों' से श्रेष्ठ होता है। अस्तु।

अनेक पौराणिक आख्यानों में – यथा, श्री दुर्गा-सप्तशती ग्रन्थ में शुम्भ-निशुम्भादि के बध की कथा में—परमात्मा शिव मध्यस्थ के रूप में ही वर्णित हैं। कथा के अनुसार, शक्तियों ने शिव परमात्मा से कहा कि वह असुरों को समझा दें, ताकि वे विनष्ट होने से बच जाये। तथापि दैत्य न माने और वे नाश को ही प्राप्त हो गये। इन प्रायः सभी कथाओं में परमात्मा शिव आर्य पक्ष किंवा सत्य पक्ष के ही अधिक निकट दृष्टिगत होते हैं, यद्यपि अनार्य पक्ष किंवा असत् पक्ष के भी वह मान्य तथा श्रद्धेय हैं।

परमात्मा शिव को अनार्यों या असत् पक्ष के लोगों से भी स्नेह है, किन्तु इस ईश्वरीय स्नेह का असत् को भी सत् में रूपान्तरित करना ही रहा है। शास्त्रों के अनुसार भगवान शिव ने सृजन की अपनी इच्छा के वश यह सृष्टि उत्पन्न की है। मूलतः भगवान शिव की यह सृष्टि शिवमयी है। हां, काल-क्रम में सृष्टि का खेल बिगड़ने पर वह सृष्टि में अवश्य हस्तक्षेप करते हैं, और उसकी सम्पूर्ण मानवता को 'अनार्य' से 'आर्य' बनाने का अनुपम-अद्वितीय सत्कार्य सम्पन्न करते हैं।

भारतीय वाङ्मय में उद्घाटित ज्ञान की बड़ी महिमा है। सारा वैदिक वाङ्मय ही वस्तुतः उद्घाटित ज्ञान (Knowledge revealed by God to man) माना जाता है, और मूल रूप में वह परमात्मा तथा आत्मा के मध्य का ही संवाद है। यथा, ऋषियों ने

प्रार्थना की और परमात्मा ने इनको अपने परम सत्य उद्घाटित किये। ऋषियों में ब्रह्मा ऋषि श्रेष्ठ, अग्रगण्य और परम सम्मानित ऋषि के रूप में मान्य है। अन्ततः, गीता में भगवान और अर्जुन के मध्य का संवाद भी परमात्मा और आत्मा का ही संवाद है, और इसमें भगवान ने अर्जुन को यही बताया है कि वेद-शास्त्रादि में असत् क्या है और सत् क्या है तथा इनका निचोड़ या निष्कर्ष क्या है! गीता में भी 'अनार्य' शब्द किसी जाति या वर्ग के प्रति नहीं अपितु निम्न या अकीर्तिकारी कर्म के अर्थ में ही प्रयुक्त किया गया है।

सारांशतः परमात्मा शिव द्वारा एक बार पुनः आज ब्रह्मा श्रीमुख से ईश्वरीय ज्ञान उद्घाटित हुआ है और इस उद्घाटित ज्ञान के अनुसार आज समस्त मानव समाज 'अनार्य' बन गया है तथा उसे पुनः 'आर्य' बनाने के निमित्त ही एक बार पुनः शिव भगवान का दिव्य अलौकिक अवतार इस भारतभूमि पर सम्पन्न हुआ है। समस्त प्राचीन कथाओं का आज पुनः एक नया अर्थ मिला है अर्थात् उनका वास्तविक रहस्य पुनः प्रकट हुआ है। वर्तमान सन्दर्भ में एक नया अर्थ यही प्रकट हुआ है कि आर्य और अनार्य नामक दो जातियाँ नहीं रही हैं, वरन् एकात्मक मानव समाज ही कभी 'आर्य' तो कभी 'अनार्य' बन जाया करता है। समस्त मानव समाज के लिए अनार्य किंवा निम्नतर से आर्य किंवा श्रेष्ठतर बनने का परम शुभ समय आज पुनः उपस्थित है।

ऊटाकमण्ड में हुए डाक्टर स्नेह मिलन के अवसर पर भ्राता गुप्ता जी सम्बोधन करते हुए। उनके साथ विजय बैंक के मैनेजर तथा भ्राता कमलपति जी बैठे हैं। श्रोतागण बड़े ध्यान पूर्वक सुन रहे हैं।

बाड़मेर में लगाई प्रदर्शनी का उद्घाटन वहां के इन्कमटैक्स आफ़ीसर भ्राता एस० एस० मेहता कर रहे हैं। भ्राता भटनागर जी, मूलचन्द जी, ब्र० कु० मीरा, फूल साथ में खड़ी हैं।

यह चित्र स्व० श्री ५ महेन्द्र जयन्ती तथा संविधान दिवस के उपलक्ष्य में नेपाल स्थित बुटवल सेवा केन्द्र द्वारा आयोजित आध्यात्मिक प्रदर्शनी के अवसर का है। बुटवल तथा मोहवा के भाई-बहन दिखाई दे रहे हैं।

बुटवल (नेपाल) में स्व० श्री ५ महेन्द्र जयन्ती तथा संविधान दिवस पर निकाली गई श्री लक्ष्मी, श्री नारायण की झांकी-जिस पर प्रथम पुरस्कार मिला।

चित्र में मेहसाना में '१३वें स्मृति दिवस' के उपलक्ष्य में कार्यक्रम में (बाएं से) ब्र० कु० नारायण (प्रवचन करते हुए) भ्राता दुदाणी जी, जिलाधीश, ब्र० कु० तृषा, ब्र० कु० सरला तथा ब्र० कु० कुमुद बहन बैठे हैं।

अर्द्ध कुम्भ मेला महोत्सव में उद्घाटन के अवसर पर बाएं से ब्र० कु० विद्या, प्रभारी अधिकारी अर्द्ध कुम्भ मेला सुभाष चन्द्र चतुर्वेदी, ध्वजारोहण करती हुई ब्र० कु० आत्म इन्द्रा जी एवं अन्य भाई-बहन खड़े है।

मल्लयुद्ध

ब्र० कु० आत्म प्रकाश, देहली

संस्कार : सतसंग में प्रतिदिन हमें यही बताया जाता है कि सदा मीठा बोलो अथवा मधुरता रूपी गुण धारण करो। परन्तु आज का तो संसार ही ऐसा है कि लोग ख्वामख्वाह उत्तजना दिलाते हैं। ऐसी स्थिति में तो मधुरता का प्रयोग असम्भव ही है।

कंवल : : उत्तेजना तो एक प्रकार की आग ही है। स्वयं को आग से बचाना हमारा अपना कर्त्तव्य है। हम घास-फूस की तरह बनते ही क्यों है कि हमें आग लग जाए। हम फ़ौलाद की तरह क्यों नहीं बनते कि आग हमें लग ही न सके अथवा शीतल की तरह क्यों नहीं बनते जो दूसरे की भी आग बुझा दें। पुनश्च, किसी कार्य को असम्भव मानना तो कमज़ोरी का लक्षण है। सर्व-समर्थ शिव बाबा के बच्चे बनकर क्या हम ऐसी कमज़ोरी वाली बातों को छोड़ नहीं सकते ?

संस्कार : हम कमजोरी अथवा कटुता को तो छोड़ना ही चाहते हैं परन्तु लोग ही हमें तंग और परेशान कर देते हैं। वे हमारी निन्दा करते हैं, ईर्ष्यावश हमारे मार्ग में विघ्न डालत हैं अथवा हमसे स्नेह का नाता नहीं निभाते। ऐसे लोगों के प्रति हमारे मन में खुशी का भाव ही नहीं है तो मधुर बोल निकलेंगे कैसे ?

कंवल : जबकि दूसरा कड़वा व्यक्ति ही मुझे अच्छा नहीं लग रहा तो अवश्य ही मेरा व्यवहार और मेरे कट वचन उसे ठीक नहीं लगते होंगे तभी तो वह निन्दा करता होगा। ख़ैर, कुछ भी हो, मैंने तो प्रतिदिन यह देखना है कि मैंने कितना समय गुण धारण किया और कितना समय दुर्गुणों के प्रभाव में रहा। दूसरों के अवगुण उठाकर स्वयं में कटुता रूपी अवगुण लाना, यह कोई बुद्धिमता तो नहीं है। मेरा मधुर स्वभाव, मीठी वाणी ही तो दूसरे के निन्दा रूपी रोग को हरेगा। विघ्न एवं निन्दा, जो ईर्ष्या की उपज है, का तो इलाज ही स्नेह और सहन-शीलता तथा मधुरता है। वरना कटुता न केवल विघ्नों के लिए निमन्त्रण है बल्कि स्वयं आत्मा के आध्यात्मिक पुरुषार्थ के लिए भी विघ्न-कारक है। अतः कटु होकर अपनी ही प्रारब्ध में विघ्न डालना तो पागलपन है।

संस्कार : कहने और करने में बहुत अन्तर होता है। इस कलिकाल के तो लोग ही बड़े अजीब हैं। उनसे यदि हम कोई भलाई भी करते हैं तो भी वे उसके बदले में कृतघ्नता से पेश आते हैं। अपमान-जनक व्यवहार करते हैं और गोया हम पर ही एह-सान लगाते हैं। अतः जब तक इन लोगों से ज़ोर-दार भाषा में अपना भाव व्यक्त न किया जाए तब तक वे समझ ही नहीं सकते कि उनका अपना व्यव-हार अनुचित है। अतः ऐसे लोगों से कड़वा न सही कड़ा रूप तो रखना ही पड़ता है।

कंवल : भलाई तो भलाई करने वाले के साथ ही चलती है, दूसरा कृतघ्न हो भी, तब भी 'नेकी

(शेष पृष्ठ २३ पर)

सम्पादक के नाम पत्र

महोदय,

फरवरी से समाचार-पत्रों में युद्ध-सम्बन्धी तैयारियों के बारे में जो समाचार छपते रहे हैं, उनसे मालूम होता है कि वातावरण में बहुत गर्मी आती जा रही है। अमेरिका के प्रधान, रीगन ने यह तो घोषित किया ही है कि वे कमज़ोरी की स्थिति में रूस के निरस्त्रीकरण के बारे में बातचीत नहीं करेंगे। वे कहते हैं कि अपने सैनिक बल को बढ़ा कर ही वे रूस को कहेंगे कि अब बात करो कि आणविक अस्त्रों शस्त्रों की संख्या कम करनी है या नहीं। ऐसी नीति पर चलते हुए, अमेरिका का इस वर्ष के बजट में आणविक अस्त्रों पर लगभग ५००० करोड़ रुपये खर्च करने की योजना है। अमेरिका अन्य देशों को लड़ाई के लिए अस्त्र-शस्त्र देने पर जो खर्च करने वाला है, वह अलग। उदाहरण के तौर पर वह पाकिस्तान को २७०० करोड़ रुपयों का सैनिक सामान तथा टर्की को लगभग ४५०० करोड़ रुपये का सामान देगा। इसके अतिरिक्त अमेरिका में गामा किरणों (Gamma Ray) वाले अत्यन्त विध्वंसक अस्त्र तथा नई प्रक्रम के जो महाशक्तिशाली लेसर किरणों वाले (Laser weapons) शस्त्र बन रहे हैं अथवा मनुष्य के स्नायुमण्डल को प्रभावित करने वाली गैस (Nerve Gas) आदि बनाने की तैयारियां हैं, वे बहुत ही भयंकर हैं। अभी पिछले दिनों अमेरिका के लोगों से इस विषय पर प्रश्न किया गया कि वे आज की परिस्थिति को कैसा मानते हैं? समाचार-पत्रों ने इस विषय में जब लोगों के मत (Opinion Poll) लिए तो परिणाम सामने यह आया कि अधिक संख्या में अब अमेरिका के लोग भयभीत हैं और ये मानने लगे हैं कि अब युद्ध और उस द्वारा महा-विध्वंस निकट है। इस प्रसंग में अमेरिका में एक भारतीय पत्रकार ने लिखा है कि—"यदि लड़ाई मनुष्य के मन में जन्म लेती है तो सच मानिए कि अगर वह शुरू नहीं हुई तो तृतीय विश्वयुद्ध निकट अवश्य है। यह विचार भय-उत्पादक अवश्य है। परन्तु इसके चिन्ह असंदिग्ध हैं (If war begins in the minds of men, World war III is near if it has not begin already. It is a chilling thought but the signs are unmistakable).

अभी पिछले दिनों अमेरिका की कांग्रेस (संसद) के समक्ष, वहां के एक अवकाश-प्राप्त एडमिरल (Admiral) एच० जी० रिकोवार, जिसने अमेरिका की आणविक पनडुब्बियां तथा जहाजपोत (Nuclber powere submarines and camies) बनाये थे, अपने एक वक्तव्य में चिन्तित लहजे में कहा—"मैंने जब ये आणविक जहाज बनाए थे तब यह एक आवश्यक दुसाधन (Necessary evil) मालूम होते थे परन्तु अब मुझे स्वयं ही इनको डुबा देने में हर्ष होगा, उसने कहा—मुझे लगता है, हम शीघ्र ही एक-दूसरे का विनाश कर देंगे। तब शायद हमारी जगह कोई दूसरी जाति पैदा होगी जो हम से अधिक समझदार होगी।"

इस प्रकार यदि हम सामरिक-समाचारों पर ध्यान दें तो विश्व-विनाश के बादल हमारे सिर पर मंडरा रहे हैं। इन समाचारों को पढ़कर प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय की भविष्य घोषणायें शत-प्रतिशत ठीक मालूम होती हैं। अब विज्ञ लोग उन्हें मानने लगे हैं।

भवदीय
'योगाभिलाषी

महोदय,

भारत सरकार ने फरवरी मास को 'समाज कल्याण' मास के रूप में मनाया है। देहली के उप-राज्यपाल महोदय ने तथा सत्तारूढ़ दल एवं विपक्षी

दल के संसद सदस्यों ने जनता से अपील की है कि सन्तति नियन्त्रण के अभियान को सफल बनाने में सहयोग दें। प्रधान मन्त्री ने हाल ही में हुई जन-गणना के आंकड़ों की चर्चा करते हुए चिन्ता व्यक्त की है क्योंकि अब भारत की जनसंख्या लगभग ७० करोड़ हो गई है। और जन-संख्या में वृद्धि की दर २४-२५% है जिसके परिणामस्वरूप सन् २००० ई० तक वह एक अरब तक पहुंच जाएगी। अतः सरकार ने इस प्रश्न को लेकर विरोधी दल तथा गैर सरकारी संस्थाओं से भी कहा है कि वे इसके समाधान में सहयोग दें क्योंकि यह एक राष्ट्रीय समस्या होने से सभी के लिए एक सांझी गुत्थी है।

परन्तु, महोदय, यह कैसी विडम्बना है कि सरकार इस समस्या को रिवाजी वैज्ञानिक साधनों मात्र के द्वारा ही हल करना चाहती है। इन साधनों पर करोड़ों रुपये खर्च करके वर्षों से परिणाम देखने के बाद भी सरकार ने अपनी नीति को कोई नई मोड़ नहीं दिया और कोई जोरदार एवं प्रभावशाली तरीका नहीं अपनाया। ऋषि-मुनियों और गांधी के इस देश में, गांधीवादी सरकार यदि बापू जी द्वारा बताए ब्रह्मचर्य पालन को इसके लिए साधन रूप में न अपनाए तो क्या कहेंगे?

महोदय, प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विद्यालय इस क्षेत्र में कार्य कर रहा है, यदि वैसा ही अन्य धार्मिक संस्थाएं भी करें तो देश का भला हो सकता है। वरना तो परमात्मा ही मालिक हैं।

देश का शुभचिन्तक
रमेश चन्द्र देहली

(मल्लयुद्ध शेष पृष्ठ २१ का)

कर दरिया में डाल'—इस उक्ति अनुसार ही हमें आचरण करना चाहिए। यदि हमें यह महसूस होता है कि दूसरा हमें एहसान जतलाता है तो हम भी अपना अहसान क्यों जतलाना चाहते हैं! फिर, हमारा कटु बोलना ही दूसरे को यह आभास देना है कि हमारे मन में भी उसके लिए कोई मान नहीं है। इस प्रकार अपमान करने के लिए हम स्वयं ही उसे

महोदय,

पिछले दिनों पत्रों-पत्रिकाओं में समाचार छपा था कि 'कर्नाटक मेडिकल कालेज' के एक नए विद्यार्थी ने इसलिए अपनी हत्या कर ली कि कालेज के पुराने विद्यार्थियों ने इस नव-आगन्तुक की मरम्मत—'रेगिंग'—की थी! देखिए तो कैसा समय आ गया है। हमारे दिनों में तो कालेज में जब कोई नया विद्यार्थी प्रवेश प्राप्त करता था, तो वरिष्ठ विद्यार्थी उसे अपने अनुज की तरह प्यार की दृष्टि से देखते थे और उसे वांछित सहयोग एवं विमर्श देते थे। परन्तु अब विदेशियों के चले जाने के बाद हमारी भारतीय संस्कृति का दिनोंदिन मलियामेट होता जा रहा है! विद्या प्राप्ति से तो मनुष्य के जीवन में शिष्टता आनी चाहिए परन्तु प्रकाशित समाचार के अनुसार तो उक्त कालेज के विद्यार्थियों ने न केवल अभद्र व्यवहार किया बल्कि उनका व्यवहार 'शर्मनाक' व्यवहार की सीमाओं को भी उलांघ कर दर्दनाक एवं हृदय-विदारक कोटि में पहुंच गया। परिणामस्वरूप बेचारे, एक होनहार युवक ने ऐसे समाज में जीना ही बेकार मान लिया।

महोदय, आज हमारे कालेजों तथा विश्व-विद्यालयों की हालत दयनीय हैं। मेरी यह हार्दिक इच्छा है कि प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय की महान बहनें इन कालेजों के विद्यार्थियों को अपनी योग-तपस्या तथा उच्च विचारों का लाभ दें ताकि युवा पीढ़ी की आध्यात्मिक नींव सुदृढ़ हो।

स्नेह में
रेखा, बम्बई

अवसर देते हैं। अतः यदि सब तरह से देखा जाय तो मधुरता की धारणा में ही व्यवहार की श्रेष्ठता, जीवन की सफलता, आचरण की उत्तमता और नैतिकता है। इसलिए, मैं अब समझ गया हूं कि कटु बनाने वाली तो माया ही है जो मुझे प्रभु-मिलन के माधुर्य से वञ्चित कराना चाहती है। माया! रावण अब चले जाओ यहां से!

□□

★ अंधियारा-उजियारा ★

ले० ब्र० ईश्वर लाल शर्मा, हटवाड़ (हि० प्र०)

पात्र-परिचय

आशा = युवती दीपक = युवक
गिरजानन्द = श्री, श्री 108 जी महाराज ।
प्रकाश = चरित्र निर्माण आध्यात्मिक संग्रहालय की इन्चार्ज ।
अन्य = कुछ स्त्री-पुरुष आदि :

[प्रथम दृश्य]

सुबह के नौ बजे हैं। आसमान खुला है। जनवरी मास की मीठी-मीठी धूप वातावरण को बहुत ही चमकीला एवं रमणीक बना रही थी। दूर पहाड़ी पर बना 'काली माता' का मन्दिर और उस पर बने चांदी के कंगारे, धूप में नहाकर बहुत ही उजले एवं सुन्दर लग रहे थे और बरबस लोगों को अपनी ओर खींच रहे थे। आज मन्दिर पर विशेष भीड़ नज़र आ रही थी। हर कोई मिन्नतें मनाने एवं माता का आशीर्वाद पाने धड़ाधड़ मन्दिर की ओर आ-जा रहा था। ऐसे समय में भीड़ से अलग-थलग एक युवक मन्दिर की सीढ़ियों पर चढ़ता हुआ दिखाई दे रहा था। उम्र ३० के आस-पास, अपने में खोया, दार्शनिक-सा दीखने वाला वह युवक, मन्दिर के प्रांगण की ओर बढ़ रहा था। तभी एक युवती मन्दिर की सीढ़ियों पर धड़ाधड़ उतरती हुई आ रही थी, जो आधुनिक युग की बोलती तस्वीर लग रही थी। आयु २५ के आस-पास। अचानक दोनों (युवक-युवती) आपस में टकरा जाते हैं। और फिर—

युवती—(तेजी से) अन्धे हो क्या? दिखाई नहीं देता? वह ज़ोर से चिल्लाई।

युवक—(शान्ति से) शायद, आप ठीक ही कह रही हैं। आप आंखें खोल कर आ रही हैं, और मैं खोलने जा रहा हूं। परन्तु खुल सकेगी? यह समय ही बतायेगा? गलती के लिए क्षमा याचक हूं। कह कर युवक मन्दिर की ओर बढ़ने लगा।

(युवती को सुनते ही जैसे काठ मार गया। उसके बढ़ते हुए कदम रुक गए। वह सीढ़ियों से हट कर एक चबूतरे पर बैठ जाती है।)

युवती—(अपने से) माता के दर्शन करने से क्या मेरी आंखें खुल गई! नहीं! मैं तो जैसी ही आई थी, वैसी ही वापिस जा रही हूं। तो क्या दर्शन और दर्पण एक जैसे ही नहीं हैं? यदि सामने हैं तो प्रतिबिम्ब दिखाई देता है, दूर हैं तो कुछ भी दिखाई नहीं देता। यह युवक कौन है? जो मेरे इस तरह के व्यवहार पर भी क्षुब्ध नहीं हुआ, बल्कि मेरे अस्तित्व को हिला कर स्वयं जा रहा है, जहां से मैं खाली एवं भटकती हुई वापिस लौट रही थी।

(तभी वही युवक वापसी में आता हुआ उसके सामने से जाने लगा, वह उठी और धीमी आवाज़ में बोली—)

युवती—सुनो! क्या जाने वाले रुक भी सकते हैं?

युवक—(रुकता हुआ) क्यों नहीं! बशर्ते कि कोई भागते हुए समय का सदुपयोग करे। युवक ने फिर शान्त भाव से कहा।

युवती—(विनीत स्वर में) मैं अपने कहे हुए शब्दों की क्षमा याचना कर रही हूं।

युवक—(हंसता हुआ) क्षमा किस बात की? आपने ठीक ही तो कहा था। इन चर्माक्षुओं से हम इस भौतिक जगत को तो देख सकते हैं, परन्तु हमारे मानस पटल पर कितना अन्धेरा है। ऐसा हमने न

कभी देखा और न इसके बारे में सोचा? सचमुच हम आंखें रखते हुए अन्धेरे में भटक रहे हैं—(आंखों में आंसू आ जाते हैं।)

(तभी पास की सीढ़ियों पर शोर होता है। कुछ नशाबाज आपस में लड़ते हुए नजर आते हैं।)

युवती—(नशाबाजों को देखकर युवक के समीप आ जाती है) बाप रे! कैसा युग आ गया है? पवित्र स्थानों पर भी अपवित्रता नाच कर रही है। (फिर युवक से) आप इतने अच्छे विचारक होकर भी मन्दिर आए हैं! इसका कारण?

युवक—एक श्रद्धाभाव कहो या ज्ञान भाव कहो। इन्सान को जीवन पर्यन्त कुछ-न-कुछ सीखना चाहिए।

युवती—(खुशी से) बहुत अच्छा, परन्तु क्या आप सत्य ज्ञान के पास पहुंच गए हैं?

युवक—(गहरे भाव से) नहीं, सत्य बहुत गहरा है। अभी उसकी अनुभूति नहीं हो सकी है, खोज में हूं—परन्तु अभी बहुत दूर हूं···बहुत दूर हूं।

युवती—अरे! हम तो बातों में ही उलझ गए। एक दूसरे तक का नाम भी नहीं जाना।

युवक—मुझे दीपक कहते हैं।

युवती—मुझे आशा कहते हैं।

युवक—(हंसता हुआ) आशा भी भटक रही है और दीपक भी प्रकाश ढूंढ़ रहा है। क्यों, ठीक है न?

युवती—बिल्कुल ठीक बिल्कुल ठीक।

युवक—तो आओ हम, अन्धेरे से छुटकारा पाने लिए तथा उजली दुनिया में जाने लिए पुरुषार्थ करें। कहीं न कहीं मंजिल तो मिल ही जाएगी।

(दोनों चले जाते हैं। पर्दा गिरता है।)

[दूसरा दृश्य]

एक बरामदा-सा दिखाई दे रहा है। बरामदे के अन्दर एक बहुत बढ़िया मंच बना है। शहर के प्रसिद्ध स्वामी गिरजानन्द जी का आज यह प्रवचन हो रहा था। लोग आने शुरू हो गए थे। कुछ वहां बैठे आपस में बतिया भी रहे थे।

पहला पुरुष—(एक आदमी की ओर इशारा करके) क्यों बे रामू के बच्चे! तू सारी ही भांग पी गया। हमारे लिए कुछ भी नहीं रखा।

दूसरा पु०—छोड़ों यार, यह स्वामी का मुंह लगा चेला है। भला हमारी परवाह कहां करेगा। लाओ तुम सिग्रेट निकालो, मैं शूट्टा (चरस) लाया हूं, इसमें भरेंगे फिर मजे से पियेंगे।

(दोनों चरस भरी सिग्रेट पीना शुरू कर देते हैं।)

तीसरा पु०—अरे नाशपीटो! यह सतसंग है या चरसघर है। जो तुम इस कदर-धुआं छोड़ रहे हो।

पहला पु०—अरे दादा! ये 'शिवजी' की बूटी है—बूटी। स्वामी गिरजानन्द खुद बहुत पवित हैं—और घोट-घोट कर पवित हैं। लो आप भी एक शूट्टा (कस) लगाओ (हंसता है)।

(तभी कुछ औरतें भी सतसंग में आ जाती हैं। तथा पुरुषों के दूसरी ओर बैठ जाती हैं।)

पहली औरत—हाय रे! मैं मर जाऊं! यहां तो मुए उस शूट्टे (चरस) की बहुत बुरी बू आ रही है। (नाक पर रूमाल रखती है)।

दूसरी औरत—क्या कहें बहन, इन पुरुषों का तो हुलिया ही टेट (बदल) हो गया है। बस जब भी देखो मुए इस शूट्टे (चरस) के नशे में चूर होई जात हैं। फिर घर वाली पर दे सोठा (डण्ड) पर सोठा बरसाए जाते हैं। कल लाजो को उसके लाड़े (पति) ने मार-मार कर बुरा हाल कर दिया। थू···थू··· ऐसों पर।

पहला पु०—(औरतों से) तुम लोग कथा सुनने के लिए आई हो या थूकने के लिए।

पहली औरत—(जल्दी से) तो आप भी शूट्टा लगाने आए हो या कथा सुनने।

(इसी बीच में आशा और दीपक भी वहां प्रवेश करते हैं। औरतों-मर्दों की नोंक-झोंक शुरु रहती हैं।)

दूसरा पु०—(गुस्से से) अगर शूट्टे की बू से डरती थी तो घर से क्यों आई? ठहर, अभी सोठा मार कर भगाता हूं। (सोठा उठाता है।)

(तभी सब औरतों का झुण्ड उसके ऊपर टूट पड़ता हैं। और जूते-चप्पलों से उसकी सेवा शुरू कर देती हैं। इसी बीच स्वामी गिरजानन्द जी सतसंग में आते हैं, मर्द-औरतों को झगड़ते देख कर···)

गिरजानन्द—अरे ! यह क्या हो रहा है, जो आप लोग इस कदर आपस में उलझ गए हो ? यह भाई सतसंग है, लतसंग नहीं। सब शान्ति से बैठ जाओ। अब मैं आपको बहुत अच्छी कथा सुनाता हूं।

(सब अपने-अपने स्थानों पर बैठ जाते हैं। कथा शुरू होती है।)

गिरजानन्द—(कथा शुरू करता है) तो बात बहुत पुरानी है। किसी देश में एक राजा रहता था। वह शिकार का बहुत शौकीन था। एक दिन शिकार करते-करते एक बहुत ही सुन्दर तालाब पर पहुंच गया। वहां एक बहुत ही सुन्दर औरत (आंखें मटकाता है) नहा रही थी। राजा ने उसे देखा तो उस पर मोहित हो गया।

आशा—(दीपक से) स्वामी को तो चारित्रिक बातें सुनानी चाहिए थी। ऐसी कथा नहीं सुनानी चाहिए।

दीपक—(दुःख से) इन बेचारों के पास ऐसी चिटकीली कहानियों के अतिरिक्त है भी क्या ? फिर जैसी दृष्टि वैसी सृष्टि और कृति।

आशा—फिर हमारी ये सत्य-ज्ञान की खोज कब तक पूर्ण होगी।

दीपक—जब तक जीवन है हमें प्रयत्न करते रहना चाहिए। आशावादी होना सबको जरूरी है। कभी-न-कभी सफलता कदम तो चूमेगी ही। चलो अब कहीं और चलते हैं।

(दोनों जाते हैं—पर्दा गिरता है।)

[तीसरा दृश्य]

शाम का समय है। आशा और दीपक अपनी खोज हेतु थके-हारे एक सड़क से गुजर रहे थे। तभी आशा की नजर एक ईमारत पर लिखे बोर्ड, जिस पर 'चरित्र निर्माण आध्यात्मिक संग्रहालय' लिखा था, ठहर जाती है।

आशा—(दीपक से) वो देखो, उस ईमारत पर 'चरित्र निर्माण' का बोर्ड लटक रहा है। लगता है हम अपनी मंजिल के पास पहुंच गए हैं।

दीपक—(हंसता हुआ) भोली आशा, क्या पहरावा बदलने से संस्कार बदल जाते हैं ? सर्वथा असम्भव है। फिर भी, हमें चलकर वहां का सीन देखना चाहिए।

(दोनों ईमारत के मुख्य द्वार पर पहुंच जाते हैं। ईमारत के कहीं एक कमरे से बहुत ही सुन्दर गीत—'अंधियारे सभी मिट गए उजियारा आ गया, बज रहा था। दोनों खड़े होकर, इस न्यारे-प्यारे गीत को सुनने लगते हैं तथा गीत के भाव से एक विशेष अनुभूति करते हैं। चेहरों पर कुछ चमक-सी आ जाती है। जैसे ही गीत समाप्त होता है दीपक का हाथ 'काल बैल' पर चला जाता है तथा दरवाज़ा खुलने का इन्तजार करते हैं। तभी दरवाज़ा खुलता है। एक १६-१७ वर्ष की लड़की दरवाज़े पर दिखाई देती है। सफेद परिधान, मुख पर रुहानी चमक तथा हर अंग से पवित्रता टपक रही है।

लड़की—(दोनों से) आइए, अन्दर आ जाइए।

(आत्मिक स्नेह से अन्दर ले जाती है। वे एक बहुत पवित्रनुमा कमरे में पहुंच जाते हैं। अगरबत्ती की महक चारों तरफ फैली हुई थी। कोई २० के तकरीबन स्त्री-पुरुष उस कमरे में सामूहिक योग में बैठे हैं। सभी के चेहरों से पवित्रता एवं रुहानी प्रेम चमक रहा है। एक योगनी एवं तपस्विन-सी दीखने वाली स्त्री गद्दी पर बैठी है। तथा सबको सामूहिक योग करा रही है। एक अलौकिक आनन्ददायक एवं शान्तियुक्त वातावरण चारों ओर फैला हुआ है और आशा-दीपक भी इसी वातावरण में खो जाते हैं। दोनों एक अलौकिक शक्ति एवं आनन्द का अनुभव करते हैं। तभी योग समाप्त होने की बेल बजती है। सभी आशा-दीपक का आंखों ही आंखों से स्वागत करते हैं। तभी उस गद्दी पर बैठी स्त्री की आवाज़ सुनाई देती है। जिसका नाम ब्रह्माकुमारी प्रकाश है।)

प्रकाश—सब पर आत्मिक स्नेह दिखाते हुए। अहा ! ओहो !! कितना आनन्द कितनी खुशी

(शेष पृष्ठ २८ पर)

देख कबीरा रोया

हर वर्ष की भांति होली अब फिर आ गयी है, लोग फिर एक-दूसरे पर रंग डालेंगे। रंग की जगह-जगह दुकानें खुलेंगी। करोड़ों रुपयों का रंग बिकेगा और करोड़ों लोग इस उत्सव को मनायेंगे। सरकार की ओर से भी इसे मनाने के लिए 'छुट्टी' होगी। एक दिन तो ऐसा भी आएगा जब बस वाले भी काफ़ी समय छुट्टी करेंगे परंतु समझ नहीं आता कि इस दिन होता तो है हुड़दंग और लोग इसे नाम देते हैं—'होली'। यह तो वैसे ही हुआ जैसे कि रंगी को 'ना-रंगी' नाम देना 'या चलती' को 'गाड़ी' कहना! यदि कबीर साहिब के दिनों में यह त्योहार होता होगा तो वे भी इसे देख कर अवश्य रोये होंगे!

फिर, लोग कहते हैं कि—'हम आज 'होली' मनायेंगे! 'मनाया' तो वास्तव में उसे जाता है जो रूठा हुआ हो। परन्तु लोग हर आने-जाने वाले पर रंग डाल देते हैं जिससे कई लोग रूठ जाते हैं, नाराज हो जाते हैं! तो कैसी आश्चर्य की बात है कि जिससे लोग बिगड़ जाते हैं, उसे यह 'मनाना' कहते हैं! यह भी कैसा 'मनाना' है जिसके कारण सरकार घोड़े सवार और पैदल पुलिस तैनात करती है और समाचार पत्रों में घोषणा करती है कि यदि कोई ज़बरदस्ती किसी पर रंग डालेगा तो उसके विरुद्ध सरकार कार्यवाही करेगी!

बड़े आश्चर्य की बात तो यह है कि लोग कहते हैं कि शिक्षा का प्रचार हो रहा है और शिक्षित लोगों की संख्या बढ़ रही है। पढ़े-लिखे लोगों को तो 'मनाने' शब्द का अर्थ मालूम होना चाहिए। करोड़ों रुपयों का रंग लोगों के कपड़ों पर डाल कर राष्ट्र की बहुमूल्य सम्पत्ति को नाकारा किया जाता है। जबकि देश में कितने ही लोग निर्धनता के कारण निर्वस्त्र हैं, तब इस प्रकार वस्त्रों को बिगाड़ना—भला 'मनाने' शब्द का यह अर्थ कैसे हुआ? आने-जाने वाले पर गुब्बारा मारना तो गोया अपने मन का गुब्बार निकालने के समान हुआ, इसमें मनाने का तो भाव ही नहीं है। यदि गंवाना ही मनाना है, तब तो हम इन नए शब्दार्थ और शब्द-कोष की शिक्षा ही अलग है।

होली शब्द का तो उच्चारण है—'हो+ली', अर्थात् जो बात हो ली अब उसका चिन्तन न किया जाय। 'बीती को बिसार दें आगे की सुधि लें'—इसी भाव का वाचक है 'हो-ली'। परन्तु इस दिन तो कई लोग बीती हुई बात को याद करके बदला लेते हुए खूब एक-दूसरे के मुख पर बे-ढंग रीति से रंग मल देते, हुड़दंग मचाते हुए अपमानित करते तथा न करने योग्य व्यवहार करते हैं, तब भला इसका नाम 'हो-ली' कैसे हुआ?

सबसे बड़ी बात तो यह है कि 'हो+ली' का रंग के साथ क्यों सम्बन्ध? वास्तव में तो ज्ञान रंग अथवा सत्संग ही का रंग ऐसा रंग है जिससे मनुष्य बीती को बिसार आगे के लिए अपने कर्मों को सुधार सकता है और हुई बात को मन से निकालकर अब से अपने सम्बन्धी एवं परिचित व्यक्तियों से मन का नाता प्रेममय बना सकता है। परन्तु तब भी कैसी अटपटी बात है कि ज्ञान का अथवा सत्संग का रंग डालने की बजाय लोग डालते हैं स्थूल रंग! मन को केसरिये या गुलाल में रंगने की बजाय वस्त्रों को रंगते हैं और कहते हैं 'होली' अर्थात रंग लिया!

'उत्सव' शब्द तो ऐसे अवसर के लिए ही प्रयोग होता है जिससे मनुष्य की खुशी अथवा उसका

उत्साह बढ़े। जिस कार्य को करने के बाद मनुष्य को यह पश्चात्ताप हो कि फलां व्यक्ति उससे नाराज हो गया होगा अथवा कि इतना रंग, इतने वस्त्र या इतना समय बेकार गया—उसे 'उत्सव' कहना भी तो भाषा की धज्जियां उड़ाना ही हुआ। भांग के गुलगुले खाकर स्वयं को भूल जाना ही यदि होली हो तो कबीर जी तो ऐसे 'उत्सव' को होली की बजाय 'भूल होली' ही कहेंगे। कबीर जी कहते हैं—

पत्थर पूजे हरि मिलें, तो मैं पूजूं पहाड़
ता ते तो चाको भली, पीस खाये संसार !

जैसे पत्थर पूजने से हरि नहीं मिलते, उसी प्रकार वस्त्रों पर यह स्थूल रंग डालने से मंगल मिलन नहीं होता। सच्चा मंगल मिलन तो प्रभु-मिलन से होता है और प्रभु-मिलन आत्मा को ज्ञान-रंग में रंगने से होता है। □

(अधियारा-उजियारा पृष्ठ २६ का शेष)

मिलती है, परमपिता की याद से। हम सभी धन्य हैं, जिनका जीवन अन्धेरे से निकल कर अब उजाले में आ गया है। प्यारे संगम युग पर ही परमपिता शिव हमारी आशा को पूर्ण तो करते ही हैं परन्तु आत्मा रूपी दीपक भी २१ जन्मों के लिए जगा देते हैं।

(तभी आशा और दीपक कनखियों से एक-दूसरे को देखते हैं तथा मुस्कुराते हैं। ब्र० कु० प्रकाश उनसे पूछती हैं।)

प्रकाश—(रूहानी स्नेह से देखते हुए) आप लोग कौन हैं? कहां से आ रहे हो?

आशा—(हाथ जोड़कर) देवी जी, मैं आशा हूं जो भटक रही थी।

दीपक—और मैं दीपक हूं, परन्तु ज्योति हीन।

प्रकाश—और अब आप क्या महसूस कर रहे हैं?

दोनों एक साथ—हमें मंजिल मिल गई···हमारी ज्योति जग गई। आशा—दीपक···प्रकाश···इन सबका मेल हो गया। जीवन को नई दिशा मिल गई।

प्रकाश—(मुस्कराते हुए) अच्छा, अब तो आपको यहां प्रतिदिन आने का निमन्त्रण दिया जाता है। प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय आपका स्वागत करता है। बोलो, आया करोगे।

दोनों एक साथ—ज़रूर ! ज़रूर !!

तभी धीरे-धीरे पर्दा गिरता है। रिकार्ड पर 'ज्योति जगा लो, अन्धेरा मिटा दो' का गीत गूंज उठता है। □

भीलवाड़ा में "अव्यक्त दिवस कार्यक्रम" में डा० शिवकुमार त्रिवेदी (सम्पादक-दैनिक जीवन) अपना अनुभव सुनाते हुए। मंच पर (बाएं से) ब्र० कु० आशा, डा० नाहर जी तथा भ्राता आर० पी० नोलखा जी विराजमान हैं

शान्ति की शक्ति

ब्र० कु० हरदीपसिंह, अम्बाला छावनी

शान्ति (Silence) की शक्ति मनुष्य की सर्व-श्रेष्ठ शक्ति है। यह साईंस की शक्ति से भी अधिक प्रभावी और सक्षम शक्ति है – साईंस का भी जन्म शान्ति की शक्ति के कारण हुआ है, इसलिए शान्ति की शक्ति एक महत्त्वपूर्ण शक्ति है जो कि विश्व-परिवर्तन का आधार है। इससे पहले कि इसकी श्रेष्ठता का वर्णन किया जाय यह जान लेना आवश्यक है कि शान्ति की शक्ति है क्या ?

'शान्ति' आत्मा का अनादि गुण है। आत्मा का स्वधर्म, सुकर्म व स्वदेश भी शान्त-स्वरूप है। सर्व आत्माओं का लक्ष्य भी शान्त को पाना है। वापिस लौटकर सभी को अपने शान्ति के देश परम धाम, ब्रह्मलोक अथवा निर्वाणधाम में जाना है। वर्तमान समय विश्व की सभी आत्माएँ एक सेकेण्ड में शान्ति का अनुभव करना चाहती हैं। शान्ति की शक्ति को प्राप्त करने की विधि स्वयं को जान लेना ही है। आज का मनुष्य स्वयं को प्रकृतिकृत देह का मालिक समझने के बजाय देह समझे बैठा है। विज्ञान के अनेक रहस्यों को जान लेने वाला मनुष्य न स्वयं को जानता है और न ही इस सृष्टि रूपी खेल के रहस्य को समझता है। इस देह को धारण करने वाला "मैं स्वयं कौन हूँ ? मैं कहाँ से आया हूँ ? मुझे लौटकर अब कहाँ जाना है ? मेरे जीवन का लक्ष्य क्या है, आदि-आदि ?" इन रहस्यों को न जानने के कारण मनुष्य के कर्म देह पर आधारित हैं। अतः परिणाम वही हुआ जो उस राजा का होता है जो अपने दास की पराधीनता और परधर्म को स्वीकार कर अपने स्वधर्म, अपनी उच्च मर्यादा और अपने स्वमान को तिलांजली दे देता है। ऐसे ही मनुष्यात्माएँ अब अपने ईश्वरीय धर्म को छोड़ कर प्रकृति के धर्म में ही टिकी हुई हैं। शरीर रूपी प्रकृति के बन्धन में ही आत्मारूपी पुरुष बन्ध गया है।

इसी देह-अभिमान के कारण आज मनुष्य की बुद्धि क्षीण हो गयी है और आत्मा इस संसार के कृत्रिम साधनों में फँस गयी है। वह यहां से उड़ कर अपने मुक्तिधाम में लौटकर नहीं जा सकती क्योंकि अब किसी की भी यह धारणा अथवा ध्यान नहीं है कि –

"मैं तो अविनाशी आत्मा हूँ। देह तो मानो मेरे वस्त्र अथवा यन्त्र हैं। आंखों द्वारा देखने, कानों द्वारा सुनने, मुख द्वारा बोलने वाला 'मैं' इनसे भिन्न हूँ। मेरा देश भी अविनाशी, शान्त, पवित्र, इस प्रकृति-कृत लोक से न्यारा है। मुझ अविनाशी आत्मा का अविनाशी पिता भी इस देह के पिता से भिन्न, सर्व-शक्तिमान, आनन्दस्वरूप परमात्मा हैं।"

यह उत्कृष्ट ध्यान न होने के कारण ही मनुष्य देह के आधार पर स्त्री-पुरुष के भान में पड़कर काम, पिता-पुत्र के भान में मोह, बड़े-छोटे के भान में अहंकार, अहंकार की आपूर्ति से क्रोध आदि विकारों में फँसा है और नीच बुद्धि हो गया है। परिणामस्वरूप देह के आधार पर मनुष्यों में देश-भेद, प्रांत भेद, भाषा भेद, रंग-भेद, धर्म-भेद, आदि की भावना दृढ़ हो गयी है और इससे द्वेष, क्रोध, बदले की भावना आदि से मनुष्य उलझा हुआ है और बन्दर से भी तुच्छ हो गया है।

कई लोग देह से न्यारी, सूक्ष्म, अव्यक्त, अविनाशी चैतन्य आत्मा की सत्ता को मानते तो हैं परन्तु चलते-फिरते, उठते-बैठते, खाते-पीते, कर्म करते हुए इस स्मृत्ति और स्थिति में नहीं रहते। क्योंकि अन्न दोष और संग दोष में फँसे वे लोग इस अवस्था को आचरण में नहीं लाते। वे बार-बार निज

स्वरूप को भूलकर काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार आदि विकारों के वशीभूत हो जाते हैं जिन विकारों की जननी देह अभिमान है। परिणाम स्वरूप मनुष्य थोड़े बहुत विकर्म तो करते ही हैं और उन विकर्मों के बन्धनवश दुःख व अशान्ति भी भोगते हैं। इनका हल है—शान्ति की शक्ति। इस लिए साइलेंस की शक्ति को बढ़ाने के लिए अपनी बुद्धि में क्रियात्मक (Practical) रूप में यह अनुभूति धारण करनी चाहिए कि—'मैं अविनाशी आत्मा हूँ। यह देह तो मैंने कर्म करने के लिए, सृष्टि रूपी रंगमंच पर खेल खेलने के लिए धारण किया है, परन्तु मैं स्वयं तो इससे न्यारा, पारलौकिक पिता की—जो शान्ति, आनन्द, प्रेम के सागर हैं, सर्व शक्तिमान हैं—संतान हूँ। इसलिए मैं देह के धर्मों से न्यारा ईश्वरीय धर्म वाला हूँ। मेरा धर्म तो पवित्रता और सम्पूर्ण शान्ति ही है। अपने मूल रूप में तो मैं अकेला हूं, कर्मातीत हूं और निर्विकल्प हूँ···।'

साइलेंस की शक्ति से माया के पांच रूप पांच दासियों के रूप में हो जायेंगे। काम विकार शुभ-कामना के रूप में, पुरुषार्थ में सहयोग व विश्व सेवाधारी बन जाता है। शान्ति की शक्ति, क्रोधाग्नि—जो ईश्वरीय सम्पत्ति जला देती है, जोश के रूप में सबको बेहोश कर देती है, को बदल कर सहनशक्ति वयोगाग्नि के रूप में परिवर्तित करती है जो पापों को जला देती है। इसी प्रकार लोभ विकार ट्रस्टी स्वरूप की अनासक्त वृत्ति के रूप में उपराम स्थिति के स्वरूप में बेहद की वैराग्यवृत्ति के रूप में परिवर्तित हो जायेगा। इच्छा मात्रम् अविद्या स्वरूप हो जाता है। यही लोभ अनासक्त वृत्ति व देने वाला दाता के रूप में परिवर्तित हो जायेगा। इसी प्रकार मोह विकार वार करने के बजाय स्नेह के रूप में बाप की याद और सेवा में साथी बन सफलता का आधार बन जाता है। ऐसे ही अहंकार विकार देह अभिमान से परिवर्तित हो स्वाभिमानी बन चढ़ती कला का साधन बन जाता है।

इस प्रकार साईलेंस की शक्ति के आधार पर यह विकार अर्थात् विकरालरूपधारी आपकी सेवा में सहयोगी श्रेष्ठ शक्तियों के रूप में परिवर्तित हो जाएँगे। इस स्वपरिवर्तन से विश्व का परिवर्तन हो जायेगा।

शान्ति की शक्ति की ही विश्व में आवश्यकता है। सर्व समस्याओं का हल शान्ति की शक्ति से ही होता है। क्यों? साईलेंस अर्थात शान्त स्वरूप आत्मा एकांतवासी होने के कारण सदा एकाग्र रहती है। एकाग्रता के कारण विशेष परख शक्ति व निर्णय शक्ति की प्राप्ति होती है जो व्यवहार व परमार्थ की सर्व समस्याओं को सुलझाने का साधन है। परमार्थ मार्ग में विघ्न विनाशक बन तीव्रगति के परिवर्तन का साधन है—माया अर्थात मानसिक कमज़ोरी को परखना और परखने के बाद निर्णय करना। परख शक्ति न होने के कारण माया के रायल रूप को रीयल समझने से यथार्थ निर्णय नहीं होता कि स्व परिवर्तन करना है कि पर परिवर्तन करना है। साईलेंस की शक्ति की अनुभूति से परखने और निर्णय शक्ति प्राप्त होने के कारण परिवर्तन तीव्रगति से होता है। साईलेंस की शक्ति व्यर्थ संकल्पों की हलचल समाप्त कर देती है। शान्ति की शक्ति कैसे भी पुराने संस्कारों को समाप्त कर देती है। शान्ति की शक्ति अनेक प्रकार के मानसिक रोगों को समाप्त कर देती है। शान्ति की शक्ति, शान्ति के सागर बाप से अनेक आत्माओं का मिलन करा, अनेक जन्मों से भटकती हुई आत्मा को ठिकाने की अनुभूति करवा, जीयदान देती है, कहावत है 'SILENCE IS GOLDEN' शान्ति की शक्ति कम मेहनत, कम खर्चा वाला नशीन करा देती है, क्यों कि समय के खजाने में भी एकानामी के कारण कम समय में अधिक सफलता प्राप्त होती है। साईलेंस की शक्ति तीनों लोकों का सैर करा सकती है। हाहाकार में जयजयकार करा सकती है। आज जबकि अनेक प्रकार की हलचल है—राजनीति की हलचल, धर्मों में हलचल, कीमत वृद्धि की हलचल, विश्वयुद्ध की हलचल—साईलेंस की शक्ति इन सभी हलचलों में अचल बना सदा सफल बना देती है।

इस शांत स्वरूप की स्थिति में सदा अतीन्द्रिय

सुख की अनुभूति होती है जिससे अनेक आत्माओं का, सहज ही आह्वान किया जा सकता है। यही शक्तिशाली स्थिति विश्व कल्याणकारी कही जाती है। जैसे साईंस के साधनों द्वारा दूर की चीजें समीप अनुभव होती हैं। टेलीफोन से समीप सुनने में आता है। टी० वी० में दूर का दृश्य सामने दिखाई देता है ऐसे साइलेंस की शक्ति वाले यह अनुभव करेंगे जैसे साकार में सम्मुख किसी ने सन्देश दिया है। चाहे कितने भी दूर हों, दूर बैठे भी प्रभु के चरित्रों को ऐसे अनुभव करेंगे जैसे सम्मुख देख रहे हो, संकल्प के द्वारा दिखाई देगा। जैसे साईंस की शक्ति का आधार लाईट है इसी प्रकार शान्ति की शक्ति का आधार है—'डिवाईन इनसाइट' अर्थात दिव्य अन्तःकरण। शान्ति की शक्ति वाले संकल्प के द्वारा जो चाहें, जैसी चाहे, जिसकी सेवा करना चाहें, वह कर सकते हैं लेकिन इसके लिए अपनी-अपनी प्रवृत्ति से उपराम रहना है।

साइलेंस की शक्ति को अब क्रियात्मक रूप से प्रयोग करना है। वाणी से तीर सभी चला लेते हैं। शान्ति की शक्ति का तीर चलाने वाले रेत में भी हरियाली कर सकते हैं। कड़े से कड़े पर्वत से पानी निकाल सकते हैं।

अव्यक्त बापदादा का भी विशेष इशारा है कि "आप सबका विशेष स्वरूप **मास्टर शान्ति के सागर** का इमर्ज होना चाहिए। मंसा संकल्पों द्वारा चारों ओर शान्ति की किरणों को फैलाओ। ऐसा पावरफुल स्वरूप बनाओ जो अशान्त आत्माएँ अनुभव करें कि सारे विश्व के कोने में यही थोड़ी सी आत्माएँ शान्ति का दान देने वाली मा० शान्ति के सागर हैं। जैसे चारों ओर अन्धकार हो और एक कोने में रोशनी जग रही हो तो सबका अटैन्शन स्वतः ही रोशनी की ओर जाता है। ऐसे सबको आकर्षण हो कि चारों ओर अशान्ति के बीच यहां से शान्ति प्राप्त हो सकती है। शन्ति के स्वरूप के चुम्बक बनो जो दूर से ही अशान्त आत्माओं को खींच सको। नयनों द्वारा शान्ति का वरदान दो, मुख द्वारा शान्त स्वरूप की स्मृति दिलाओ। संकल्पों द्वारा अशान्ति के संकल्पों को मर्ज कर शान्ति के वायब्रेशन फैलाओ। इसी विशेष कार्य अर्थ याद की विशेश विधि के द्वारा सिद्धि को प्राप्त करो। अभ्यास करो मुझ आत्मा के शान्त स्वरूप के वायब्रेशन्स कहाँ तक कार्य करते हैं। शान्ति के वायब्रेशन नज़दीक की आत्माओं तक पहुंचते हैं व दूर तक भी पहुचते हैं। अशान्त आत्मा के ऊपर अपने शान्ति के वायब्रेशन्स का अनुभव करके देखो।"

इस प्रकार शान्ति की शक्ति एक माहन शक्ति है जिस द्वारा न तो निज स्वरूप की विस्मृति हो सकती है और नहीं पररात्मा को भूल जा सकता है परिणाम स्वरूप अपनी स्थिति भी ऊँची बनेगी। उस अलौकिक, अव्यक्त, मौलाई मस्ती की स्थिति में रमें रहने पर संसार के छूट ही जाने वाले विषयों और भागों में दुखदायक आशक्ती भी नहीं रहेगी। इस अव्यक्त स्थिति में रहने से न केवल विकारों की उत्पत्ति नहीं होगी बल्कि इस स्मृति से पिछले जन्मों में हुए विकर्मों का बन्धन ऐसे कटेगा जैसे मक्खन से बाल सहज निकलता है। दुःख और अशान्ति के पहाड़ जितने बोझ से निस्तारा पाने का एकमात्र उपाय है-

००

"सुनो!"

ब्र० कु० राजकुमारी, शालीमार बाग, देहली

न आज की, न कल की
है सदा की हमारी बात;
दिन रहे या कि रहे रात,
हो शुष्क या हो बरसात;
हमारी तो सदा रहती होली।
ज्ञान रत्न नित-नित भरते झोली ॥

लेते ही जन्म ब्राह्मण कुल में—
सर्वप्रथम बने हम 'होली' (Holy)
हुए थोड़े बड़े, हर कदम—
विकारों की जलाई होली।
करते सदा रूहानी डाँस,
देते न माया को कभी चांस।
हर श्वाँस रचाए रोली।
हमारी तो सदा रहती होली ॥

नाना सँस्कारों को झट,
किया ना-ना औ हट,
हो के दूर औ अनभिज्ञ अवगुणों से,
रंग ले विभिन्न दिव्य गुणों के,
मले आत्म मुख पे मनाएँ बाप संग होली।
अजी ! हमारी तो बस यही है होली ॥

आओ तुम सब भी आओ,
संग हमारे होली मनाओ,
विकारों की होली जलाओ,
और गुणों के रंग उढ़ाओ,
बिसरो बातें बीती—
न बिगाड़ो सकल भोली
अरे ! हो-ली सो हो, ली।
दी है बाबा ने यही "टोली"
पाती हम हँसों की टोली।
हमारी तो सदा रहती होली ॥

मोदीनगर में आयोजित शान्ति दिवस समारोह में बहन गायत्री मोदी अपने उद्गार प्रकट करते हुए। मंच पर (बायें से) ब्र० कु० विनोद जी, ब्र० कु० कमल सुन्दरी जी, डॉ० आर० एस० त्यागी जी, सेठ विनोद कुमार जी बैठे हैं।

सर्वोत्तम त्याग-सर्वोत्तम भाग्य

ब्रह्मा कु० ऊषा, सहारनपुर

"त्यक्तेन भुंजीथाः"

मानव जीवन में त्याग एवं तपस्या का अत्यधिक महत्व है। त्याग ही सर्वश्रेष्ठ भाग्य प्राप्ति का सहज साधन है। त्याग द्वारा ही भाग्य तो क्या भाग्य-विधाता स्वयं अपना बन जाता है। किन्तु वह ऐसा कौन-सा त्याग है जिसके द्वारा सर्वोच्च भाग्य स्वतः ही बन जाता है।

"जब 'मैं' था तब हरि नहीं, अब हरि हैं 'मैं' नाही" अर्थात् जब तक मानव के अन्दर 'मैं पन' अर्थात् देहाभिमान रहता है, वह उसे उसके सर्वश्रेष्ठ भाग्य अर्थात् परमात्मा की प्राप्ति से दूर अथवा वंचित ही रखता है किन्तु जिस पल वह इस मैं-पन अथवा देहाभिमान का त्याग करता है उसी पल वह अपने परमप्रिय परमपिता परमात्मा के सामीप्य एवं सानिध्य का अनुभव स्वतः ही करने लगता है।

सबसे कठिन त्याग

त्याग द्वारा ही भाग्य प्राप्ति होती है। लेकिन सबसे अधिक भाग्य प्राप्त कराने वाला एवं मेहनत लेने वाला त्याग है-देहाभिमान का त्याग। कारण—सर्व समस्याओं एवं सर्व कष्टों का मूल एवं मुख्य कारण ही है देहाभिमान। इसी को छोड़ना ही बड़े से बड़े त्याग है। स्थूल त्याग करना तो सहज है। क्योंकि स्थूल त्याग तो यदि कोई एक बार करे तो वे किनारा कर लेते हैं। लेकिन देहाभिमान का जो त्याग है वह अनोखा है। हर सेकेन्ड देह का तो आधार लेते भी रहना है लेकिन देह में रहते हुए भी न्यारे बनना है। हर क्षण देह साथ होने कारण एवं देह के साथ गहरा सम्बन्ध होने कारण देहाभिमान भी बहुत गहरा हो गया है अतः इसे मिटाने में भी कठिन मेहनत लगती है।

'देहाभिमान' शब्द से ही प्रश्न उत्पन्न होता है कि देहाभिमान का अभिप्राय क्या है और वह किस प्रकार मानव की भाग्य प्राप्ति में बाधक बनता है?

'देहाभिमान' का अभिप्राय है कि मानव अपने वास्तविक स्वरूप—आत्म स्वरूप को विस्मृत कर इस शरीर को ही, जो कि उसको कर्म करने के लिए केवल साधन मात्र वा माध्यम के रूप में मिला है, अपना वास्तविक स्वरूप समझ लेता है। इसी के सम्बन्ध में हर पल विचरण करता है। अर्थात् देह, देह के सम्बन्ध एवं दैनिक पदार्थों को ही केन्द्र बिन्दु मान उसके समस्त क्रिया-कलाप चलते हैं। परिणामतः आत्म स्वरूप बिल्कुल विस्मृत हो जाता है और वह विकारों के बन्धन में पूर्णतया जकड़ जाता है। माया के बीहड़ वन में भटक वह स्वरूप स्वधर्म-स्वपिता, स्वदेश, स्वलक्ष्य-लक्षण आदि सब भूल दुःखी एवं अशान्त भटकता है। उसका स्वयं का अज्ञान अथवा देहाभिमान ही उसे प्रभु से दूर ले जाता है। वह पुकारता है—"असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्यो मा अमृतम् गमय।" यही देहभान उसके वा उसके परमपिता परमात्मा के मिलन में बाधक बनता है। लेकिन जिस पल वह इस देहभान का त्याग करता है उसी पल उसको अपने स्वरूप की पहचान होती है वह अपने पिता परमात्मा को प्राप्त करता है अर्थात् उसका मिलन उस प्रभु से हो जाता है। क्योंकि सम्पूर्ण कल्प में यही वह शुभ सुहावना संगम समय है जब वह करुणा-सिन्धु परमात्मा स्वयं आकर भटकी अशान्त आत्मा को उसकी राह दिखा उसे अपनी गोद में लेते हैं। उसका भाग्य बनाते हैं। किन्तु जितना त्याग उतना भाग्य की प्राप्ति। वर्तमान में भी एवं भविष्य में भी।

सबसे बड़ा भाग्य

कल्याणकारी संगम युग तो सर्वश्रेष्ठ प्राप्ति का युग है। ऐसा नहीं कि संगम युग में सिर्फ त्याग करना है और भविष्य में भाग्य लेना है। ऐसा नहीं है। जो जितना त्याग करता है और जिस घड़ी त्याग करता है उसी घड़ी जितना त्याग उसके बदले में उसका भाग्य जरूर प्राप्त होता है। सबसे बड़ा भाग्य विधाता भगवान अपना बन जाता है।

संगम युग में त्याग का प्रत्यक्ष रूप में भाग्य क्या मिलता है? सतयुग में तो मिलेगा जीवन मुक्त पद। परन्तु अब क्या मिलता है। संगम युग में त्याग का बड़े-से-बड़ा यही भाग्य मिलता है कि **स्वयं भाग्य विधाता अपना बन जाता है**। यह तो सबसे बड़ा भाग्य हुआ ना। अगर त्याग नहीं तो परमप्रिय परमपिता परमात्मा भी अपना नहीं। जब देहभान है तो क्या उस परमपिता, जो सुख, शान्ति, आनन्द, प्रेम पवित्रता का सागर है, की याद है? क्या उस परमप्रिय पिता के सामीप्य का अनुभव है? या उससे समीप के सम्बन्ध का अनुभव है? कदापि नहीं। जब देहाभिमान का त्याग करते हैं तो देही अभिमानी अर्थात् आत्माभिमानी बनने से प्राप्ति क्या होती कि निरन्तर प्रिय बाबा की स्मृति में रहते अर्थात् हर पल के त्याग से हर पल के लिए परमपिता परमात्मा से सर्व सम्बन्धों का और सर्वशक्तियों को अपने साथ अनुभव करते। तो क्या यह सर्वोत्तम वा सर्वश्रेष्ठ भाग्य नहीं। पर भाग्य भी केवल भविष्य में ही नहीं वरन् वर्तमान में भी। सहज ज्ञान एवं सहज राजयोग भविष्यफल ही नहीं वरन् प्रत्यक्ष फल देने वाला है। भविष्य तो वर्तमान के साथ बन्धा हुआ ही है। लेकिन यह सर्वश्रेष्ठ भाग्य सारे कल्प में और किसी भी समय प्राप्त नहीं करते। जो ना कभी संकल्प में, ना स्वप्न में, वह प्राप्त हो जाता है। जो ना कभी संकल्प में, ना स्वप्न में था वह प्राप्त हो जाए इसको ही कहा जाता है भाग्य। जो वस्तु मेहनत से, परिश्रम से प्राप्त हो उसको भाग्य नहीं कहा जाता। स्वत: ही मिलने से असम्भव सम्भव हो जाता है। ना उम्मीदवार से उम्मीदवार हो जाते हैं इसलिए ही इसको भाग्य कहा जाता है। पुकारते तो कुछ और थे—केवल चरण रज चाहते थे वा कहते थे हमको सिर्फ कुछ-न-कुछ अपना बना लो। इतना ऊंचा बनना नहीं चाहते थे लेकिन मिला क्या है। स्वयं तो बन गए लेकिन बाप को भी सर्व प्रकार से अपना बना लिया। तो क्या यह भाग्य नहीं।

सदैव यह स्मृति में रखना है कि यदि देहभान का त्याग नहीं किया अर्थात् आत्मभिमानी नहीं बने तो भाग्य भी अपना नहीं बना सकेंगे। इस कल्याणकारी पुरुषोत्तम संगम युग का जो श्रेष्ठ भाग्य है उससे वंचित रहेंगे। यदि सारे दिन में कुछ समय तो अभिमान का त्याग रहता है और कुछ समय अवस्था नीची रहती है - देहभान का त्याग नहीं रहता तो संगम युग में श्रेष्ठ भाग्य से उतना ही वंचित रहेंगे। उतना समय प्रभु प्राप्ति वा अतीन्द्रिय सुख अर्थात् परमपिता के सामीप्य से दूर रहेंगे।

वर्तमान समय भाग्य विधाता परमपिता हर क्षण भाग्य बनाने की विधि बता रहे हैं तो उसी विधि से सिद्धि को प्राप्त करना चाहिए। इसके लिए मीठे प्यारे बाबा ने जो हमें सहज साधन बताया है उसे प्रयोग कर पूर्ण लाभ उठाना है। अन्तर्मुखी होकर सूक्ष्म निरीक्षण करना है कि संकल्प के रूप में व्यर्थ संकल्प का कहां तक त्याग किया है, वृत्ति के रूप में जो वृत्ति भाई-भाई (क्योंकि आत्मिक स्वरूप में हम सर्वात्माएं उस परमपिता परमात्मा की सन्तान होने के कारण आपस में भाई-भाई हैं) की रहनी चाहिए। उस वृत्ति को कहां तक अपनाया है और देह में देहधारीपन की वृत्ति का कहां तक त्याग किया है।

स्नेही के स्नेह में त्याग सम्भव है। जिससे स्नेह होता है उस स्नेही के स्नेह में त्याग कोई बड़ी बात नहीं होती। विकारों के सम्बन्ध में स्नेह में आकर अपनी सुध-बुध का त्याग किया और अपने शरीर का भी त्याग किया। बच्चों के स्नेह में मां अपने तन की सुख-सुविधा का भी त्याग करती है। देह-

धारियों के देह के सम्बन्ध के स्नेह में अपना पवित्रता का ताज वा तख्त और अपना असली स्वरूप सब छोड़ दिया ना तो अभी जब बाबा के स्नेही बने तो क्या यह देहाभिमान का त्याग नहीं कर सकते। क्या यह कठिन वा असम्भव है ? कदापि नही किंचित नहीं। वरन् अति सहज है।

देहाभिमान-त्याग और सहज साधन

त्याग का अति सहज वा सरल उपाय वा साधन है अपने वास्तविक अर्थात् आत्मिक स्वरूप में स्थित होकर उस परमपिता परमात्मा को याद करना। मुझ आत्मा का निजी स्वरूप व संस्कार कौन से हैं ? जो मेरे परमप्रिय परमपिता परमात्मा के गुण हैं वही हमारे गुण हैं। वह ज्ञान का सागर, शान्ति का सागर, सुख का सागर, आनन्द का सागर···है वह सागर है, हम स्वरूप हैं। सदैव यही मनन चिन्तन करना है कि मुझ आत्मा के अनादि आदि संस्कार वही हैं जो मेरे बाबा—परमपिता परमात्मा के हैं। अनादि तो मैं आत्मा हूँ ही शान्त स्वरूप एवं आदि संस्कार भी तो दैवी हैं। यथा संकल्प तथा स्मृति, यथा स्मृति तथा सामर्थ्य हर कर्म में होगी।

स्वस्थिति को सदा त्यागी एवं सदा भाग्यशाली बनाने लिए स्वयं का सूक्ष्म आन्तरिक निरीक्षण एवम् स्व नियन्त्रण वा स्वानुशासन अति आवश्यक है। स्वयं का ऐसा निरीक्षण वा नियन्त्रण करना है जो स्वतः ही परिवर्तन आ जावे। उसके लिए जो अथाह निधि हमको प्यारे बाबा से प्राप्त हुई है उसका प्रयोग आवश्यक है। लेकिन प्रयोग के साथ उस निधि के लिए मितव्ययी भी बनना है। यह सूक्ष्म एवम् अति अमूल्य निधि 'समय', 'संकल्प', 'श्वास' एवम् इसके साथ-साथ अविनाशी ज्ञान रत्नों की जो अथाह धनराशि हमें प्राप्त हुई है उसके लिए भी मितव्ययी बनना आवश्यक है।

'संकल्प' की निधि को व्यर्थ न गंवाएँ तो संकल्प समर्थ एवम् श्रेष्ठ होगा। श्रेष्ठ संकल्प से प्राप्ति भी श्रेष्ठ होगी। इसी प्रकार यदि संगम युग के 'समय' की निधि को भी व्यर्थ ना किया तो एक जन्म में अनेक जन्मों की प्राप्ति बन जाएगी। ऐसी ही बात 'श्वास' की निधि की भी है। यदि हर श्वास में परमपिता परमात्मा की स्मृति रहे तो जन्म-जन्मान्तर के लिए सर्व खजाने प्राप्त हो जाएँगे। ऐसे ही यदि ज्ञान रत्नों की अमूल्य अपार निधि को नहीं सम्भाला, इसे प्राप्त कर खत्म कर दिया तो यह भी व्यर्थ चला जावेगा। इसका मनन ना किया और मनन के पश्चात उस धन से जो अपार खुशी, उमंग उल्लास का अन्तीन्द्रिय सुख प्राप्त होता है उस सुख वा खुशी में स्थित रहने का अभ्यास नहीं किया तो मानो वह भी व्यर्थ ही चला गया। अतः हमें सदैव अपने अति मीठे अति प्यारे बाबा से जो अथाह अमूल्य अपार निधि प्राप्त हुई है उससे स्वयं को सम्पन्न बना उस आत्मिक सुखानुभूति में निमग्न रहना है। अतीन्द्रिय सुख के झूले में सदा झूलना है जिससे मन मयूर सदा ही प्रफुल्लित रहेगा। सम्पूर्ण कल्प में यही तो कुछ अमूल्य घडियां हैं जब कि हर पल उस परमप्रिय परमपिता के अति सामीप्य सानिध्य वा उसकी प्यारी गोद में रहने का अनुभव हो सकता है। कितना न तुच्छ त्याग किन्तु कितना परम सौभाग्य !

□

ऊना (हि० प्र०) में पिता श्री जी के "स्मृति दिवस" पर कार्यक्रम में पधारे विशेष व्यक्तियों के साथ वहां के ब्र०कु० भाई-बहन खड़े हैं

कलकत्ता में राजयोग विश्व-शान्ति महोत्सव

भारत के पूर्वीय क्षेत्र में स्थित सेवा केन्द्रों की की ओर से कलकत्ता के प्रसिद्ध मैदान "परेडग्राउण्ड" (विक्टोरिया मैमोरियल के सामने) में एक विशाल पाण्डाल में 'राजयोग विश्व शान्ति महोत्सव' का आयोजन २१ जनवरी से ५ फरवरी १९८२ तक हुआ। इस विशाल महोत्सव के अन्तर्गत "राजयोग मेला", "राजयोग प्रशिक्षण शिविर" तथा 'राजयोग विश्व शान्ति सम्मेलन' आदि का बहुत ही शिक्षाप्रद, आकर्षक व मनोरंजक कार्यक्रम हुए। जिसे लगभग ५ लाख लोगों ने देखा और लाभान्वित हुए। सर्वप्रथम 'राजयोग मेला' का उद्घाटन कलकत्ता उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश भ्राता शम्भुचरण घोष द्वारा टेप काटकर तथा मुख्य प्रशासिका राजयोगिनी आदरणीय दादी प्रकाशमणी जी के कर कमलों द्वारा २१ फरवरी को 'शिव ध्वजारोहण' द्वारा हुआ। इस अवसर पर आयोजित सार्वजनिक कार्यक्रम में दूर-दूर से पधारे हुए अनेक विद्वान वक्ताओं के प्रवचन हुए तथा पूर्वीय क्षेत्र की इंचार्ज राजयोगिनी ब्रह्माकुमारी निर्मल शान्ताजी ने ईश्वरीय सन्देश दिया। लाईट एण्ड साउण्ड का आकर्षक कार्यक्रम का उद्घाटन भी दीपक जलाकर आदरणीया दादी प्रकाशमणी जी द्वारा सम्पन्न हुआ तथा 'राजयोग शिविर' का उद्घाटन भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश तथा वर्तमान समय राज्य सभा के सदस्य भ्राता एस० पी० मित्रा ने किया। प्रतिदिन सुबह तथा सायंकाल राजयोग शिविर व ज्ञान-शिविर के तीन सत्र होते थे जिनसे कई हजार लोगों ने लाभ उठाया इसके परिणामस्वरूप सैकड़ों नए भाई-बहिन वहां के सेवा केन्द्र पर प्रतिदिन आते रहते हैं।

दो सप्ताह के इस कार्यक्रम में आध्यात्मिक प्रवचनों शिक्षाप्रद गीतों, कविताओं एवं नाटकों का कार्यक्रम इतना आकर्षक होता था कि पाण्डाल खचा खच भरा रहता था तथा उपस्थित जनता बड़े ही शान्त-चित्त होकर एकाग्रता से इस कार्यक्रम को देखती रहती थी। दोपहर तथा सायंकाल को प्रतिदिन प्रमुख विषयों पर विभिन्न वर्गों के लिए आयोजित विभिन्न सम्मेलनों में अनेक विद्वान वक्ताओं के प्रवचन तथा सांस्कृतिक कार्यक्रम भी हुए। इनमें से 'डाक्टरस', 'न्याविद् सम्मेलन', 'महिलाओं के लिए सम्मेलन' 'युवक सम्मेलन' 'शिक्षाविद् सम्मेलन', 'धार्मिक सम्मेलन' आदि का नाम उल्लेखनीय है। जिनमें विभिन्न वर्ग के लोगों ने विशेष भाग लिया। मेले में 'नवदुर्गा', धर्मराज पुरी व शान्ति कुण्ड का पाण्डाल सभी लोगों को बहुत प्रभावित करता था। इसके अतिरिक्त शहर के प्रमुख भागों से दो दिन विशाल शोभा यात्रा भी निकाली गई जिसमें ट्रकों पर चार आकर्षक व शिक्षाप्रद झांकियों के अतिरिक्त भारत व विदेशों से आए हुए लगभग ६००० प्रतिनिधियों ने भाग लिया तथा कलकत्ता नगरी के कोने-कोने में ईश्वरीय सन्देश जन-जन तक पहुंचाने के लिए दूरदर्शन, आकाशवाणी द्वारा भी कई बार प्रसारण हुए तथा समाचारपत्रों ने विशेष समाचार परिशिष्ट व लेख भी प्रकाशित किए। हजारों पोस्टरस, बैनर्स, कार्ड व पर्चों द्वारा भी कलकत्ता नगरी के कोने-कोने में रहने वाले लोगों को इस कार्यक्रम की सूचना पहुंचाई गई जिसके परिणामस्वरूप यह कार्यक्रम बहुत ही सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ।

★★

क्या सन्यासी सनातन धर्म के रक्षक हैं?

ब्रह्माकुमार सूरज, मधुवन, माउण्ट आबू

—००—००—

हिन्दू धर्म के अनेक विघटन होते देख सन्यासियों में चिन्ता की ज्वाला उत्तेजित हो चुकी है कि हम हिन्दू धर्म की रक्षा करें। वे दूसरों की आलोचना द्वारा या हिंसा बल से धर्म को सहारा देना चाहते हैं, परन्तु वे कलियुग के प्रभाव में शास्त्रों की इस बात को भी शायद भूल गये हैं कि पाप कृत्यों से पुण्य को बढ़ावा नहीं मिल सकता।

सनातन धर्म का नाम क्या है?

यह प्रश्न सुनते ही सनातन धर्म के एक विद्वान दिन में ही तारे गिनने लगे। इस धर्म के वास्तविक नाम व धर्मपिता के बारे में अनभिज्ञता उन्हें अपनी कमज़ोरी का आभास कराने लगी।

वास्तव में जिस धर्म के अनुयायी अपने धर्म का नाम तक नहीं जानते, जिन धर्मावलाम्बियों को अपने धर्मपिता का नाम तक याद नहीं वे धर्म के सिद्धान्तों का पालन करने में भी कहाँ समर्थ हो सकते हैं।

'सनातन' अर्थात पुरातन या शाश्वत्। इसका पूर्ण नाम "आदि सनातन देवी देवता धर्म" है। क्योंकि यह सृष्टि के आदि से ही प्रारम्भ हुआ और धर्म के आदि पुरुष स्वयं देवी देवता थे। इसका अस्तित्व सृष्टि चक्र के मध्य तक रहा और तदुपरान्त कालचक्र में वह धर्म विलीन हो गया और मध्य काल के बाद उसके अनेक खण्ड व सम्प्रदाय हुए जिनमें से शंकराचार्य द्वारा प्रचलित 'सन्यास' एक खण्ड है जो बहुत काल के बाद और अब से लगभग १५०० वर्ष पूर्व प्रचलित हुआ। उससे पूर्व सन्यास का आधुनिक स्वरूप नहीं था।

सनातन धर्म का स्थापक कौन?

सनातन धर्म के 'स्थापक' के बारे में अनभिज्ञता इसके पतन का मूल कारण बनी! कई विद्वान वेदों को ब्रह्मा के मुख से प्रकट हुआ भी मानते हैं। परन्तु सत्यता यह है कि सतयुग के पूर्व ही, अर्थात कलियुग के अन्त में परमात्मा ने प्रजापिता ब्रह्मा के मुख द्वारा सत्य ज्ञान प्रकट किया, जिसके द्वारा आदि सनातन देवी देवता धर्म की स्थापना हुई। और तत्पश्चात महाविनाश हुआ और पवित्र आत्माओं अर्थात देवी देवताओं ने इस देवी देवता धर्म के सत्य स्वरूप में स्थित रहते हुए सम्पूर्ण सृष्टि पर साम्राज्य किया। दो युग के बाद वही लुप्त ज्ञान वेद व्यास ने सम्वाद के रूप में गीता के नाम से लिखा और कुछ ऋषियों ने वेद और परमात्मा के उन चरित्रों के अनेक ग्रन्थ लिखे। तो वास्तव में आदि सनातन देवी देवता धर्म की स्थापना ज्ञान-सागर निराकार परमात्मा ने स्वयं प्रजापिता ब्रह्मा द्वारा कल्प के आदि में की थी। श्री कृष्ण, श्री राधे, श्री लक्ष्मी, श्री नारायण, श्री राम-सीता उसी धर्म की मुख्य आत्माएँ थीं।

सन्यासियों का सनातन धर्म से सम्बन्ध नहीं है

'सन्यास' की स्थापना बहुत काल बाद हुई। सन्यास निवृत्ति मार्ग है व सनातन धर्म प्रवृत्ति मार्ग। सन्यासियों का लक्ष्य समाधिस्थ होकर ब्रह्म में लीन होना है जबकि सनातन धर्मावलम्बियों के पूर्वज देवी देवता थे, जिनकी वे पूजा करते हैं। सन्यासियों का सनातन धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं। सन्यासोपनिषद् में वर्णित सन्यास के लक्षण इस बात की स्पष्ट पुष्टि

करते हैं। सन्यासी को देव पूजन का, शिष्य बनाने का, धन संग्रह का, शास्त्र पढ़ने का, एक स्थान पर ही ३ दिन से अधिक रहने का, गृहस्थियों से सम्बन्ध रखने का अधिकार नहीं है? परन्तु आज कितने सन्यासी हैं जो सन्यास के लक्षणों का पालन करते हैं? नारी को नर्क का द्वार कहने वाले अब नारियों द्वारा पाँव दबवा रहे हैं। तो भला, जो महान पुरुष स्वयं के ही सिद्धान्तों का पालन नहीं करते, वे अपने या दूसरों के धर्म की रक्षा कैसे करेंगे?

परन्तु सन्यासी जब से जंगल छोड़कर नगरों में आये तो उन्होंने समाज उद्धार के बहाने सनातन धर्मियों से सम्बन्ध जोड़ लिया।

धर्म की रक्षा पवित्रता से होती है –

धर्म की रक्षा के २ मुख्य पहलू में, एक—पवित्रता और दूसरा—उस धर्म के सिद्धान्तों का पालन।

प्रारम्भ में सन्यासी पवित्र थे और निसन्देह उनको पवित्रता ने धर्म को सहारा दिया। परन्तु जब से सन्यासियों ने स्वयं को सनातन धर्मियों के गुरु घोषित किया और वे उनकी सेवाएँ स्वीकार करने नगरों में आये तो अपवित्र गृहस्थियों का भोजन खाने से उनकी पवित्रता क्षीण हुई। फलस्वरूप 'संयास' का मान समाप्त हुआ और वे धर्म को बल न दे सके।

इसलिए अगर सन्यासी धर्म की रक्षा करना चाहते हैं, तो उन्हें वे सब प्रपंच छोड़कर जिनमें वे उलझे हैं, पुनः एकान्त में जाकर सम्पूर्ण पवित्रता व तपस्या के बल से धर्म व सृष्टि को बल व सहारा देना होगा। केवल शास्त्र विद्वता, खण्डन-मण्डन, यज्ञ और आहुतियाँ इस कर्त्तव्य में अपनी श्रेष्ठ भूमिका नहीं निभा सकेगी। और न ही डन्डे के ज़ोर से धर्म को बचाया जा सकता है। तलवार के ज़ोर से किसी धर्म को नष्ट नहीं किया जा सकता। मुगल शासन के ऐसे अनेक ज्वलन्त उदाहरण साक्षी हैं।

सनातन धर्म का रक्षक कौन?

आदि सनातन देवी देवता धर्म का रक्षक स्वयं इसका स्थापक परमात्मा ही है। स्थापक ही रक्षक भी होता है। गीता में स्पष्ट है—परमात्मा ने कहा है, "मैं साधुओं की रक्षा करने आता हूँ" तो जो साधू स्वयं की रक्षा करने में भी समर्थ नहीं हैं उनकी रक्षा भी भगवान को करनी होती है, तो वे साधू सनातन धर्म की रक्षा कैसे करेंगे?

विद्वान इस धर्म के आदि स्वरूप से परिचित नहीं हैं,और इसी कारण सनातन धर्म का यह स्वरूप हुआ है। आदिकाल में इस देवी देवता धर्म में सम्पूर्ण पवित्रता थी। योग-बल का साम्राज्य था। तब सन्यासी नहीं थे। मनुष्य स्वयं ही देवता थे। दुःख ही नहीं था जो सन्यासी बनना पड़े। गृहस्थ ही आश्रम था। गृहस्थ सुख का साधन था। धर्म व राज्य सत्ता, दोनों एक के ही हाथ में थी। प्रकृति दासी थी। मनोविकार वातावरण में भी नहीं थे। यही सनातन देवी देवता धर्म का आदि स्वरूप स्वर्ग कहलाता था। सनातनी केवल उस स्वरूप की पूजा मात्र व गुणगान ही कर रहे हैं।

अब पुनः परमात्मा प्रजापिता ब्रह्मा द्वारा उसी लुप्त आदि सनातन देवी देवता धर्म की स्थापना कर रहे हैं। और जो मनुष्य आदि काल में देवी देवता थे, उन्हें ही पुनः उनके आदि स्वरूप की स्मृति दिलाकर "पवित्रभव" का वरदान देकर धर्म की रक्षा करा रहे हैं। और महानिवाश के बाद केवल वही एक धर्म अस्तित्व में रह जाएगा।

शास्त्रों के अनुसार ही, धर्म ग्लानि के समय परमात्मा स्वयं अवतरित होकर धर्म की व साधुओं की रक्षा करते हैं। यह कहीं भी वर्णन नहीं कि परमात्मा किसी सन्यासी के रूप में अवतरित हुए।

क्या यज्ञ से धर्म की रक्षा होगी।

यज्ञ में सामग्री स्वाह व मन्त्र जाप से क्षणिक वातावरण भले ही शुद्ध हो, मानव का मन स्वच्छ नहीं होता। कितने काल से अनेक यज्ञ हो रहे हैं, परन्तु क्या धर्म का स्वरूप निखरा। तो जिन साधनों से धर्म की उन्नति नहीं हुई, उनसे धर्म की रक्षा की कामना करना कहाँ तक बुद्धिमानी है।

सत्यता तो यह है कि जब भगवान इस सृष्टि पर आते हैं तो वे अविनाशी रुद्र ज्ञान यज्ञ रचते हैं, जिसमें

मनुष्यात्माएँ अपने मनोविकारों की आहुति डालकर पावन बनती हैं, जिससे विनाश ज्वाला प्रकट होकर आसुरी सम्पदा को नष्ट कर देती है और सत्य धर्म की रक्षा होती है। उसी रुद्र यज्ञ से मनुष्य देवता बनता है। उस यज्ञ में सभी प्रचलित यज्ञ भी स्वाह हो जाते हैं। इस रुद्र यज्ञ में अग्नि नहीं जलती, योगाग्नि जलती है। इस यज्ञ में मन्त्र जाप नहीं होता बल्कि भगवान की, मन को मोहने वाली ज्ञान वीणा झंकरित होती है। इस यज्ञ में अश्व स्वाह नहीं होते, सबके शरीर रूपी अश्व स्वाह होते हैं। इस यज्ञ में सन्यासी हिस्सा नहीं लेते, बल्कि स्वयं ब्रह्मा व ब्रह्मा वत्स ही इस यज्ञ को सम्पन्न करते हैं।

सन्यासी, सनातन धर्म के सिरमोर नहीं

सनातन धर्म के हैड सन्यासी नहीं हैं, देवी देवता हैं जो कि प्रवृत्ति मार्ग के हैं। सनातन धर्म प्रवृत्ति मार्ग का है, उसके हैड निवृत्ति मार्ग वाले कैसे हो सकते हैं। वास्तव में सनातन धर्मी सन्यासियों के शिष्य नहीं बन सकते। क्योंकि सनातन धर्मी अगर सन्यासी का अनुसरण करें, तो उन्हें प्रवृत्ति मार्ग छोड़ना पड़े। अतः वास्तव में किसी भी संयासी को सनातनियों का गुरु बनने का अधिकार नहीं, और न ही देवी देवताओं के शास्त्र पढने का अधिकार है।

आह्वान—

क्या सन्यासियों को सनातन धर्म के पतन का एहसास है? अब परमात्मा स्वयं सभी आत्माओं का आह्वान कर रहे हैं कि "आओ बच्चे, तुम मुझे भूले हो", "तुम मेरे बच्चे हो" मुझसे अपना नाता जोड़ो।

इसलिए हे धर्म-प्रेमियों, अब भगवान की आवाज़ सुनकर अपने कानों को सफल बनाओ। गुरुओं की आवाजें सुन सुनाकर कान थक चुके हैं। अब भगवान के मधुर बोल से सच्चा ईश्वरीय रस व परम-आनन्द प्राप्त करो जिससे जन्म जन्म की तृष्णा शान्त होगी व मन मयूर नाच उठेगा।

गाड़ी छूटने वाली है

—ब्र० कु० रिखी किशोर, रायपुर

संगम युग पर खड़ी है गाड़ी,
सतयुग जाने वाली है;
पवित्रता की टिकिट कटालो,
गाड़ी छूटने वाली है॥ १॥

कर्मातीत ही सिगनल देगी,
प्रकृति झंडा हिलायेगी,
अणु युद्ध की हार्न बजेगी,
निज गाड़ी बढ़ जायेगी॥
आओ आत्म भाई बैठो,
ये गाड़ी बड़ी निराली है॥ २॥

ज्यादा बोझ अब नहीं उठाओ,
बन फ़रिशता उड़ते आओ,
त्याग लोभ को छोड़ बोझ को,
पावन बनकर आओ॥
दृष्टि उठाकर आगे देखो,
वह सतयुग हरियाली है॥ ३॥

समय नहीं अब दौड़ना-चलना,
सदा निरन्तर उड़ते रहना,
करो अभ्यास पूरण अभी से,
नित एक रस हो रहना॥
सीट अभी ही बुक करालो,
सेटिंग होने वाली है॥ ४॥

नेपाल के महाराजा के जन्म दिन पर राजयोग शिविर का उद्घाटन राजबहन दीपक जलाकर कर रही है साथ में शीला बहन, गीता बहन तथा ब्रह्म समाज सभा के सदस्य भ्राता तेजराम जी खड़े हैं। →

चिकोडी में 'अव्यक्त स्मृति दिवस' के कार्यक्रम में बाएं से ब्र० कु० अद्वयानंद जी प्रवचन करते हुए, ब्र०कु० रमा जी तथा चरमूसी मठ के महन्त स्वामी जी विरजमान हैं। ←

बटाला में 'स्मृति दिवस' कार्यक्रम के अवसर पर ब्र० कु० सरला बटाला के एस० डी० एम को ईश्वरीय साहित्य भेंट करती हुई। साथ में ब्र० कु० गीता, सुलक्षणा तथा अन्य बहन-भाई खड़े हैं। →

भक्तपुर (नेपाल) में विश्व नव निर्माण प्रदर्शनी का उद्घाटन नगर पंचायत के सदस्य दीपक जलाकर कर रहे हैं। ←

सिरसी में 'अव्यक्त स्मृति दिवस' कार्य-क्रम का है। दाएं से भ्राता सीताराम हेगडे, एस० वीं हेगडे, डिप्टी सुप्र० पुलिस भ्राता नवल जी, तथा ब्र० कु० गायत्री जी दिखाई दे रहे हैं। →

सिद्धपुर में 'स्मृति दिवस' कार्यक्रम में (बाएं से) ब्र० कु० विजय, विजू भाई शाह, भ्राता धनशंकर पंडया तथा ईश्वरभाई तथा सर्व शिवबाबा की याद में बैठे हैं। →

होली का त्योहार

ब्र० कु० कमलमणि, कृष्णानगर, देहली

होली के त्योहार की मान्यता भारत के प्रमुख त्योहारों में है। परन्तु इस त्योहार का रूप वर्तमान समय आदि रूप से एकदम अलग है। वास्तव में यह त्योहार अनेक आध्यात्मिक रहस्यों को अपने में छुपाए हुए है, परन्तु आज इस त्योहार को मनाने वाले आध्यात्मिकता तथा नैतिकता को एक तरफ छोड़कर, छेड़छाड़, हुल्लड़बाजी तथा किसी से बदला निकालने के रूप में मनाते हैं। जिससे भारत में भी तथा अन्य देशों के अनेकानेक शिष्ट व्यक्तियों को इस त्योहार के विकृत रूप को देखकर इससे नफरत पैदा होने लगी है। अतः अभी आवश्यकता है कि होली के त्योहार का वास्तविक एवम् आध्यात्मिक अर्थ जानकर इस त्योहार को मनायें तब ही मानवमात्र में एक नयी जीवन दिशा का उदय हो सकेगा।

होली मनाने का तरीका

होली का त्योहार शिवरात्रि के महापर्व के बाद, फाल्गुन मास की पूर्णिमा के दिन मनाया जाता है। लोग इसे चार प्रकार से मनाते हैं। (i) वे एक-दूसरे पर रंग डालते हैं अर्थात् संस्कार और स्वभाव मिलाने की प्रेरणा देते हैं। (ii) होलिका जलाते हैं जिसका अर्थ है अपने किये हुए बुरे कार्यों को और बुरे विचारों को अग्नि में स्वाहा करना है, (iii) मंगल-मिलन मनाते हैं जो हमें प्रेरणा देता है कि हम अपने अन्दर से ईर्ष्या-द्वेष आदि को मिटा दें, (iv) कई लोग श्री कृष्ण को झूले में झूलता दिखाते हैं जिससे हमारे अन्दर भी उल्लास आता है कि हम भी इसकी भांति अतीन्द्रिय सुख के झूले में झूलते रहें। हम अभी इस त्योहार की तिथि तथा उपरोक्त रीतियों पर ध्यान देंगे।

भारत में, देशी वर्ष फाल्गुन की पूर्णमाशी को समाप्त है। तथा फाल्गुन की पूर्णमाशी की रात्रि को होलिका जलाने का तात्पर्य है पूर्ण अर्थात् पूरे हुए वर्ष की गलतियों, बुरे विचारों को अग्नि प्रवाहित कर दें और शुरू होने वाले वर्ष के प्रथम मास से हंसते-गाते और पवित्रता का पालन करते चलें, क्योंकि हर वस्तु अग्नि प्रवाहित होने पर, पवित्र (शुद्ध) हो जाती है।

इसके अतिरिक्त पूर्ण हुए वर्ष के अन्त में इस पर्व को मनाना दूर दृष्टि से इस बात का परिचय देता है। यह त्योहार कल्प के कलि-काल के अन्त में मनाया गया था जिसके बाद नई सतयुगी दुनिया के सुख-शान्ति तथा पवित्रता सम्पन्न दिन शुरू हुए अर्थात् उसके कलियुग अन्त के दुख-रोग-अशान्ति-दरिद्रता आदि समाप्त हो गये। परन्तु विचार करने की बात है कि क्या होलिका में लकड़ियां या गोबर के कण्डे आदि जलाने से मानव के सभी दुःख-दर्द खत्म हो गये थे व खत्म हो जायेंगे ?

इससे स्पष्ट होता है कि कण्डे आदि की अग्नि नहीं बल्कि योगाग्नि जलाने से ही हमारे बुरे संस्कार, विचार व बोल समाप्त होंगे जिससे ही हम नई सतयुगी दुनिया में सम्पूर्ण सुख-शान्ति का भोग कर सकेंगे। अर्थात् यह पर्व हमें परमपिता परमात्मा शिव से बुद्धि का योग लगाने की प्रेरणा देता है जिसे सुख-शान्ति-पवित्रता का सागर भी कहते हैं। इसीलिए शिवरात्रि (शिव जयन्ती) के बाद होली आती है जो इस बात का प्रतीक है कि परमात्मा शिव जब इस धरती पर आते हैं तो जो मनुष्यात्माएं उनसे बुद्धि योग लगाती हैं वही पूर्ण सुख-शान्ति तथा पवित्रता को पाती हैं।

होलिका का अर्थ

कई लोग होलका का अर्थ "भुना हुआ अन्न" मानते हैं। होलिका के मौके पर लोग गेहूं और जौ की बालों को भूनते हैं। योगियों की भाषा में ज्ञान और योग (तपस्या) को अग्नि से उपमा दी गयी है—जैसे भुना हुआ बीज नये फल की उत्पत्ति नहीं कर सकता वैसे ही ज्ञान-योगयुक्त अवस्था में किया गया कर्म, विकर्म का रूप नहीं ले सकता अर्थात् वह विकारी मनुष्यों के संग में फल नहीं देता। अतः होलिका इस बात का भी प्रतीक है—परमपिता परमात्मा शिव ने कलियुगी सृष्टि के अन्त में मनुष्यात्माओं को ज्ञान-योग की अग्नि में कर्म रूपी बीज को भूनने की जो सद्मति दी थी अर्थात् शुद्ध कर्म करने की प्रेरणा दी थी, हम उसी का पालन करें। अर्थात् कुछ लकड़ियों और उपलों को जलाने को ही होली न मान ले बल्कि योगाग्नि से अपने पुराने एवं दूषित संस्कारों को दग्ध करें और जो कर्म करें वह ज्ञान-योगयुक्त होकर करें।

होली का अर्थ हम दूसरे शब्दों में इस प्रकार भी कर सकते हैं (i) होली अर्थात् बीती सो बीती, जो हुआ उसका की चिन्ता न करो तथा आगे के लिए जो भी कर्म करो वह योगयुक्त होकर करो। (ii) होली अर्थात् होली (हो गई), मैं आत्मा अब ईश्वर-अर्पण होली अर्थात् अब जो भी कर्म करना है वह परमात्मा के आदेश अथवा मत पर ही करना है। (iii) होली (Holy) अंग्रेजी भाषा से होली का अर्थ हिन्दी में 'पवित्र' है, तो जो भी कर्म करना है वह किसी मनोविकार के वशीभूत होकर न हो अर्थात् शुद्ध (पवित्र) हो। इस प्रकार से हम होली के त्योहार के एक शब्द से ही अनेक शिक्षाएं ले सकते हैं।

होली पर रंग

होली के त्योहार पर रंग डालने की प्रथा इस बात की प्रतीक है जैसे ज्ञान के अनेक प्रयायवाची शब्द हैं—अंजन, अमृत, अग्नि आदि, उसी प्रकार ज्ञान को रंग भी कहा जाता है। ज्ञानी मनुष्य अपने संग अर्थात् सम्पर्क-समबन्ध में रहने वाली आत्माओं को भी ज्ञान का रंग चढ़ाता है, उन्हें चोला धारण करने वाली चोली (आत्मा) को परमात्मा से सम्बन्ध जुड़वा कर उसकी लाली से लाल करता है अर्थात् शक्ति लेने की विधि बताता है।

जब तक मनुष्य स्वयं ज्ञान में रंगा न हो और दूसरों को भी ज्ञान में न रंगे तब तक वह आनन्दित नहीं हो सकता अर्थात् उसका परमात्मा से मधुर मिलन नहीं हो सकता और उसका जीवन अलौकिक सुखों से वञ्चित रह जाता है। ज्ञान के बिना मनुष्यात्मा परमात्मा से मंगल मिलन कैसे मना सकती है ? आज इस संसार में अज्ञानी अर्थात् मायावी मनुष्य अपने काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा अहंकार के वशीभूत संस्कारों से दूसरों का अमंगल करता है ; वह मंगल-मिलन तभी मना सकता है, जब ज्ञान-सागर में आत्मा को धो (रंग) डाले अर्थात् पुराने दूषित आचार-विचार मनोविकार को ज्ञान-याग की अग्नि में दग्ध कर दे। यही वास्तविक होली है। □

देवास में 'बैंक नोट प्रैस' के परिसर में आयोजित 'औद्योगिक शान्ति प्रदर्शनी' का उद्घाटन करने के पश्चात् बैंक नोट प्रैस के जनरल मैनेजर भ्राता एम० व्ही० चार ब्र० कु० निशा द्वारा चित्र की व्याख्या बड़े ध्यान से सुन रहे हैं

"विश्व-विनाश
एक सत्य
एक सम्भावना"

ब्रह्माकुमार श्याम पचौरी, एम० ए०, सिकन्दराराओ (अलीगढ़)

समय प्रति समय समाचार पत्र एवं पत्रिकाओं में विश्व के विनाश के बारे में ज्योतिषियों, विचारकों एवं वैज्ञानिकों तक की भविष्यवाणियां प्रकाशित होती रहती हैं। इसमें अधिकांश तो यही प्रतिष्ठित कर रही हैं कि सन् १९८२-८३ में सुनिश्चित रूप से अणु युद्ध छिड़ जाएगा और उससे सारा विश्व कुछ ही घन्टों में ज़हरीली गैसों एवं अणु-आयुधों की विस्फोटक गर्मी से जल भुनकर खाक हो जायगा। यही नहीं अमेरिका ने वर्तमान समय में ऐसा प्रलंयकारी न्योट्रोन बम बनाया है जिससे मनुष्य तथा जीव-जन्तु तो समाप्त हो जायेंगे लेकिन भौतिक वस्तुयें भूमि मकान आदि सुरक्षित रहेंगे। अर्थात् बिना मनुष्य के ये महल माणियां सब भूतों का निवास बन जायेंगे। क्योंकि अणु युद्धों से अकाल मृत्यु को प्राप्त मनुष्यात्माएं भूत योनि लेकर ही इनमें सूक्ष्म शरीर से निवास करेंगी।

विनाश के बारे में निरन्तर छपने वाली इन भविष्यवाणियों में लोगों में कोई खास निश्चय नहीं रहा क्योंकि अधिकांश भविष्यवाणियां उस गडरिये के बालक वाली कहानी चरितार्थ कर रही हैं जो जंगल में भेड़ें चरा रहा था। उसने लोगों को मज़ाक के रूप में चिल्लाकर बुलाना शुरू किया कि बचाओ, बचाओ। भेड़िया आया, भेड़िया आया। लोग उसे बचाने दौड़े तो वह गड़रिये का बालक हंसने लगा क्योंकि भेड़िया तो आया ही नहीं था। लोग उसके मज़ाक पर क्षुब्ध होकर चले गए। एक दिन सचमुच ही भेड़िया आ गया, गडरिये का बालक ज़ोर-ज़ोर से मदद को चिल्लाता रहा लेकिन ग्रामवासियों ने पहले की तरह से गडरिया के बालक की पुकार को मज़ाक समझा और मदद को नहीं गए। परिणामस्वरूप भेड़िया बालक को खा गया। ठीक उसी प्रकार विचारकों, वैज्ञानिकों की स्पष्ट चेतावनियों एवं वैज्ञानिक सत्य तथ्यों पर विश्वास न कर मानव अज्ञान की गहरी नींद में कुम्भकरण की तरह सोया पड़ा है। परिस्थितियां उसे विनाश की स्पष्ट झलक भी दिखा रहीं हैं। परन्तु उसे इतना विवेक ही नहीं रहा कि उनको देख सके क्योंकि अज्ञान का मोटा पर्दा उसके विवेक की आंखों को ढके हुए है।

जीवन को क्षण भंगुरता देखकर भी यह मानव कितनी गहरी नींव देना चाहता है। आकाश के नीले पटल पर उज्जवल अक्षरों में लिखे अदृश्य के लेख जब लुप्त हो जाते हैं तब ये प्रभात समझने लगता है। अपनी नीची लेकिन सुदृढ़ स्थिति से ऊपर उठने के लिए ऊंचों से प्रतिस्पर्धा करता है। परिणामतः अपने चरित्र को बेच कर छल-कपट-प्रपंच-अत्याचार भ्रष्टाचार-रिश्वतखोरी-बेईमानी करके पाप पूर्ण धन कमाता है। गरीबों का खून चूसता है। लेकिन उसकी यही नीचे से ऊंचा उठने की हवश उसके एवं समाज के लिए एक अभिशाप बन जाती है। पाप की कमाई और उसकी धन की हवश उसमें वासनाओं का भूत पैदा कर रही है। गलत तरह से अर्जित धन गलत तरह से खर्च हो रहा है। इससे समाज में विषमता पैदा हो रही है। काला धन, शराब खोरी, जुआ, अनैतिकता एवं दहेज प्रथा जैसी सामाजिक कुरीतियों को जन्म दे रहा है। **एक तरफ अम्बार अनाज के एक तरफ मटका खाली. शानदार दावतें कहीं तो कहीं है सूनी थाली**। दया, क्षमा, करुणा नष्ट हो गई है। रक्षक भक्षक बन गए हैं। लोग डकैतों से ज्यादा पुलिस से डरते हैं। भले आदमी की इज्जत बचनी मुश्किल है। चिकित्सक धर्मराज सहोदर बन जीवन दान देने के बजाय नकली दवाइयों से एवं हृदय-हीनता से मृत्यु दान मरीज़ को देकर इस दुखी संसार से शीघ्र मुक्ति दिलाकर पुण्य का काम कर रहे हैं।

सारा विश्व एक खौफ़नाक दौर से गुजर रहा

है। बड़े देश छोटे देशों को आपस में लड़ाकर उनको फौजी सामान देकर धन हड़प रहे हैं। हथियारों की होड़ में जन-धन पानी की तरह बहाया जा रहा है। इधर लोग अन्न-वस्त्र के अभाव में उच्छृंखल एवं शासन विरोधी होकर भयंकर गृह-युद्ध की तैयारी कर रहे हैं। राजे-महाराजे पुनः अपना राज्य वापस आने का स्वप्न देख रहे हैं। भाषावाद, प्रान्तवाद, जातिवाद, सम्प्रदायवाद का जहर जान-बूझकर इन तथाकथित नेताओं द्वारा जनता के जीवन में घोला जा रहा है। धर्म के ठेकेदार धर्म का नाम तो लेते हैं लेकिन धर्म का काम नहीं करते। धर्म, धर्म का खंडन करते, मजहब से लड़ते मजहब हैं, दो मजहब वाले आपस में मिलकर रह लें क्या मजाल है! तो स्पष्ट है कि अब तो विश्व का विनाश एक सम्भावना ही नहीं परन्तु सत्य है।

गीता के भगवान निराकार ज्योतिस्वरूप परमात्मा कल्याणकारी शिव ने यही तथ्य बताया है। प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय भावी विनाश का सामना करने के लिए राजयोगी बनने की शिक्षा दे रहा है। प्रत्येक नर-नारी इसे सीखे-समझे, धारण करे।

□□

बढ़ते जाना

रिखी किशोर, रायपुर

निज पथ पर बढ़ते जाना है ।।
आह भरी सुन ली पुकार,
करते जिनका, नित इंतजार।
ज्योति बिन्दु है निराकार,
आकर यहां हुआ साकार ।।
पदम कमाई कदम कदम में
हर पल करते जाना है ।।निज पथ ।।
आकर दी निज पहचान,
तोड़ा है देह का अभिमान ।
आत्मायें हैं नूरे जहांन,
बनाने आए दिव्य महान ।।
अतुल भण्डार हैं ज्ञान के,
धारण करते जाना है ।। निज पथ ।।
लक्ष्य दिया है बाबा आकर,
क्या न मिला उन्हें पाकर ।
शिव परमात्मा ज्ञान का सागर।
परिपूर्ण बनाते गीत गाकर ।।
श्री मत के कोमल पुष्प की,
राहों पर बढ़ते जाना है ।। निज पथ ।।
विकार जाल में थी रूह बेहोश,
पिलाकर ज्ञानामृत लाया होश।
सुख शान्ति का दे अनुपम कोष,
किया है रूहों को सन्तोष ।।
अनोखे आभूषण से आत्मा का,
श्रृंगार करते जाना है ।। निज ···।।
पिता से मिल रही राजाई,
शिक्षक से हो रही पढ़ाई ।
विकारों से हो रही लड़ाई,
सत्मार्गों की धार बहाई ।।
धर्म सेवा ज्ञान योग प्रवाह में,
निरन्तर बढ़ते जाना है ।। निज···।।
आत्मा-परमात्मा का ये संगम,
पिता-पुत्र का है ये संगम ।
कलियुग सतयुग का ये संगम,
दिन रात का है ये संगम ।।
संगम की इस चढ़ती कला में,
सदा चढ़ते ही जाना है ।। निज पथ पर···।।

□□

आध्यात्मिक सेवा समाचार

ब्र० कु० श्रीराम, कृष्णानगर, देहली द्वारा संकलित

इन्दौर सेवा केन्द्र से किरण बहिन लिखती हैं कि न्यूयार्क से मोहिनी बहिन के यहां आने पर प्रैस कलब की ओर से निमन्त्रण मिला। यह पहला चांस था कि ब्र० कु० बहिन को निमन्त्रण दिया क्योंकि प्रैस कलब में राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के व्यक्तियों को ही बुलाते हैं। वहां पर सम्मेलन किया गया जिससे काफी प्रैस वालों की संख्या को परमपिता का परिचय मिला।

बड़ौदा सेवा केन्द्र से ब्र० कु० राज तथा ब्र० कु० निरंजना लिखती हैं कि पादरा गांव की विट्ठल वाड़ी तथा अमरदीप अपार्टमेंट में दो-दो दिन की प्रदर्शनी लगाई गई जिनके द्वारा करीब ७००० आत्माओं ने लाभ उठाया। इसके अतिरिक्त प्रोजैक्टर शो तथा राजयोग शिविरों के द्वारा अनेक आत्माओं ने लाभ प्राप्त किया। १८ जनवरी को स्मृति दिवस के अवसर पर भी अमरदीप एपार्टमेंट के हाल में सम्मेलन रखा गया, जिसमें ३०० भाई-बहिन उपस्थित हुए।

पणजी (गोवा) सेवाकेन्द्र की ओर से शिवोली गांव में तीन दिन की आध्यात्मिक प्रदर्शनी तथा प्रवचन और तीसरे दिन प्रोजैक्टर शो का कार्यक्रम रखा गया, जिससे ७०० आत्माओं ने लाभ उठाया।

पूना सेवा केन्द्र की ओर से १४ जनवरी को संक्रांत तिलगुल समारोह के उपलक्ष्य में एक प्रवचन का कार्यक्रम रखा गया था जिसमें रुद्रवाणी तथा सद्गुरु माडली मैगजीन के सम्पादक भ्राता पुरुषोत्तम बिरकर रिसर्चर अन्य संस्कृतज्ञ आदि भी शामिल हुए। इस कार्यक्रम से १५० आत्माएं लाभान्वित हुई।

मणिनगर सेवा केन्द्र की ओर से १५-१६ जनवरी को दो-दो घंटे का व्याख्यान माला कार्यक्रम रखा गया, जिसका विषय था "कर्मयोगी जीवन और सर्वोत्तम सेवा।" १७ जनवरी को वी० आई० पीज़ का स्नेह मिलन रखा गया, जिस अवसर पर ब्र० कुमारी जानकी दादी तथा मोहिनी बहिन भी पधारी थीं। सिंधी समाज में बाबा की प्रत्यक्षता के लिए भी दो-दिवसीय अलौकिक कार्यक्रम का आयोजन किया गया। इसके अतिरिक्त १८ जनवरी को स्मृति दिवस के अवसर पर इस सेवा केन्द्र की गीता पाठशाला बारेजा और यहेगाम की ओर से प्रवचन का कार्यक्रम रखा गया, जिससे गांव की भावना प्रधान जनता बहुत प्रभावित हुई।

श्री गंगानगर सेवाकेन्द्र से ब्र० कु० विद्यावती लिखती हैं कि इस मास एफ-ब्लाक में १० दिन के लिए आध्यात्मिक प्रदर्शनी लगाई गई, जिससे अनेक आत्माओं ने लाभ उठाया।

तिरुपति सेवाकेन्द्र की ओर ७.१.८२ से १५.१.८२ तक आध्यात्मिक मेले का आयोजन किया गया। ७ जनवरी को श्री वेंकटेश्वरा हाईस्कूल के मैदान में मिनी मेले का उद्घाटन तिरुपति तिरुमला देवस्थानम् के अधिकारी भ्राता पी० वी० आर० के० प्रसाद द्वारा सम्पन्न हुआ। ८ जनवरी को शांति यात्रा निकाली गई। इसके अतिरिक्त अन्य दिनों में विभिन्न वर्गों के सम्मेलन रखे गए तथा ८ योग शिविर भी आयोजित किए गए। प्रतिदिन राजयोग फिल्म, आनन्द फिल्म भी दिखाई जाती थी इस प्रकार इस मेले से कई हजार आत्माओं ने लाभ प्राप्त किया। प्रैस सम्मेलन के दिन मुख्य-मुख्य समाचार पत्रों के ५ संवाददाता पधारे जिन्होंने मेले का समाचार अपने-अपने पत्रों में चार दिन तक प्रकाशित किया।

जोधपुर से फूल बहिन लिखती हैं कि गत मास

बाड़मेर शहर में सेवाकेन्द्र की ओर से तीन दिन की विश्व-नव-निर्माण प्रदर्शनी का आयोजन किया गया जिससे लगभग ६००० आत्माओं ने लाभ उठाया तथा ८० आत्माओं ने योग शिविर भी किया जिनमें से ५० आत्मायें प्रतिदिन नियमित क्लास कर रहे हैं।

चन्द्रपुर सेवाकेन्द्र से ब्र० कु० कुसुम लिखती हैं कि स्मृति दिवस के उपलक्ष्य में यहां के न्यू इंगलिश हाई स्कूल में चार दिन की व्याख्यान माला का आयोजन किया गया जिससे ३०० भाई-बहिनों ने लाभ उठाया। १७ जनवरी को प्रतिष्ठित व्यक्तियों का स्नेह मिलन रखा गया, जिसमें व्यापारी, डॉक्टर इंजिनियर, हैडमास्टर, प्रोफैसर्स, पुलिस अधिकारी आदि शामिल हुए। १८ जनवरी को स्मृति दिवस के उपलक्ष्य में एक सार्वजनिक कार्यक्रम रखा गया, जिसमें मुख्य अतिथि चन्द्रपुर जिला अधिकारी की धर्म पत्नी श्रीमति जोसेफ तथा पुलिस अधिकारी भ्राता उपाध्याय जी थे। इसके अतिरिक्त चन्द्रपुर तथा बरोरा में तीन-तीन दिन की विश्व नव निर्माण प्रदर्शनी और राजयोग शिविरों का आयोजन भी किया गया जिनसे लगभग ६००० आत्माओं ने लाभ प्राप्त किया।

वारंगल सेवाकेन्द्र की ओर से १५-१६-१७ जनवरी को योग शिविरों का आयोजन किया गया जिनसे ७० बी आई पीज़ लाभान्वित हुए। १८ जनवरी को स्मृति दिवस बड़े उमंग से मनाया गया तथा शाम को एक सार्वजनिक कार्यक्रम रखा गया जिसमें वहां के म्यूनिसिपल चेयर मैन भ्राता अब्दुल खडर जी तथा मुख्य डाक्टर भ्राता लक्ष्मण मूर्ति जी भी पधारे थे।

इलाहाबाद सेवाकेन्द्र से ब्र० कु० मनोरमा लिखती हैं, यहां अर्ध कुम्भ मेले के अवसर पर "विश्व कल्याण आध्यात्मिक प्रदर्शनी", "बाल चरित्र निर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी" तथा साहित्य स्टाल और राजयोग शिविर का मंडप सजाया गया। जहां प्रतिदिन प्रवचन भी चलता था। १२ जनवरी को अर्ध कुम्भ मेले के प्रभारी अधिकारी भ्राता सुभाष चन्द्र चतुर्वेदी द्वारा उद्घाटन कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। १२ जनवरी से २६ जनवरी तक लाखों आत्माओं ने शिव पिता का संदेश प्राप्त किया तथा ५०० आत्माओं ने योग शिविर भी किया।

रायचूर (कर्नाटक) सेवाकेन्द्र की ओर से ७-२-८२ को "पिता-श्री पर्याय पारितोषिक अन्तर महाविद्यालय चर्चा स्पर्धा" आयोजित की गई, जिसका विषय था "आध्यात्मिक ज्ञान से ही वर्तमान समस्याओं का हल हो सकता है।" इस अवसर पर विजेताओं को पुरस्कार भी वितरित किए गए।

रतलाम सेवाकेन्द्र से ब्र० कु० कला लिखती हैं कि शिव बाबा का संदेश देने के लिए विभिन्न औद्योगिक संस्थानों में "औद्योगिक शान्ति प्रदर्शनी" का आयोजन किया गया, जिनमें प्रमुख स्थान हैं (i) दी रतलाम स्ट्रा बोर्ड फैक्टरी (ii) जयंत विटामिन्स लिमिटेड (iii) मध्यप्रदेश विद्युत मंडल, रतलाम (iv) रतलाम अल्कोहल प्लांट, रतलाम (v) परफैक्ट पाटरीज। प्रत्येक फैक्टरी में तीन दिवसीय प्रदर्शनी लगाई गई। सभी फैक्टरियों के मालिकों तथा कर्मचारियों से काफी अच्छा सहयोग मिला। प्रदर्शनी का समाचार "नई दुनियां" तथा अन्य स्थानीय समाचार पत्रों में भी छपा। इस प्रदर्शनी से अनेकों लोगों ने लाभ प्राप्त किया।

मुलुंड बम्बई सेवाकेन्द्र की ओर से स्मृति दिवस के उपलक्ष्य में ३१ दिसम्बर से १७ जनवरी तक "दिव्य कहानी" तथा "आध्यात्मिक चलचित्र" का कार्यक्रम दामोल, शिरोवली, बरसोली, महाड़, पोयनार, अलिबाग, थाना वर्तक नगर, श्री रंग सोसायटी, भिवंडी, भाण्डूप, लोनावला, शहाड़, शाहापुर, कलवा, माझिवाड़ा, मुलुन्द कालोनी, मुलुन्द पूर्व, थाना पूर्व-पश्चिम आदि स्थानों पर किया गया, जिनसे करीब ३०,००० आत्माओं ने लाभ प्राप्त किया। १७ जनवरी को मुलुन्ड पूर्व में एक बड़े पैमाने पर विश्व शांति महोत्सव का कार्यक्रम किया गया, इसी दिन प्रातः ७ से ८.३०

बजे तक प्रभात फेरी भी ब्रह्मा-बाबा की दिव्य झांकियों के साथ निकाली गई। इस कार्यक्रम से भी ५००० भाई-बहिनों ने लाभ प्राप्त किया। इस कार्यक्रम का उद्घाटन नगर विकास राज्य मंत्री भ्राता चन्द्र कांत त्रिपाठी जी ने किया।

नेपाल से समाचार मिला है कि नेपाल नरेश श्री ५ वीरेन्द्र के ३७ वें जन्म दिवस के उपलक्ष में गठित त्रिदिवसीय नगर स्तरीय कार्यक्रम के अन्तर्गत नेपाल स्थित बुटवल सेवाकेन्द्र की ओर से विभिन्न कार्यक्रमों के साथ राजा का जन्मोत्सव मनाया गया।" विश्व का स्वर्णिम काल" अंकित भव्य एवं दिव्य लक्ष्मी-नारायण की झांकी सजाकर नगर परिक्रमा की गई। तत्पश्चात् जलूस स्थानीय रत्नोद्यान मैदान में एक आम सभा के रूप में परिणत हुआ, यहां पर ब्र०कु० सुरेन्द्र जी ने विद्यालय की ओर से राजा एवं रानी की सुस्वास्थ्य तथा दीर्घायु की कामना की। ब्र० कु० सुरेन्द्र जी द्वारा ही मंच से राजा के ३७ वें जन्म दिवस के स्मृति स्वरूप ३७ विशिष्ट व्यक्तियों को ईश्वरीय सौगात प्रदान की गई। झांकी मूल्यांकन कमेटी द्वारा बुटवल सेवाकेन्द्र को लक्ष्मीनारायण की झांकी का प्रथम पुरस्कार मिला। इसके बाद अगले दिन प्रवचन का कार्यक्रम रखा गया। यह कार्यक्रम भी बहुत सफल रहा।

मंगलौर तथा बसरूर सेवाकेन्द्र से ब्र० कु० शकुन्तला लिखती है कि रोटरी कलब कुंजपुर के निमंत्रण पर "विश्व भ्रातृत्व—विश्व शांति तथा चरित्र निर्माण आध्यात्मिक प्रदर्शनी" लगाई गई। साथ २ राजयोग शिविर भी लगाए गए। यह प्रदर्शनी एक सप्ताह तक चली जिसको रोटरी कलब के प्रैजीडैंट तथा अन्य कई सदस्यों ने देखा तथा सभी ने राजयोग की उपलब्धियों की सराहना की। इसके अतिरिक्त विभिन्न विषयों पर प्रवचन भी किए। प्रदर्शनी तथा प्रवचनों से हज़ारों आत्माओं ने जीवन लाभ प्राप्त किया।

नासिक सेवा-केन्द्र से गीता बहिन लिखती हैं कि जन-जन को ईश्वरीय संदेश देने हेतु पिता-श्री का १३ वां स्मृति दिवस बहुत धूमधाम से मनाया गया। आध्यात्मिक प्रदर्शनी, चेतन झांकियों, राजयोग शिविरों, तथा प्रौजेक्टर शो के द्वारा हज़ारों आत्माओं ने लाभ प्राप्त किया।

भीलवाड़ा सेवाकेन्द्र से आशा बहिन लिखती हैं १८ जनवरी को १३ वां स्मृति दिवस बड़ी धूमधाम से मनाया गया तथा रात्रि को एक सार्वजनिक कार्यक्रम रखा गया, जिसमें डाक्टर, वकील, इंजिनियर, जज, पत्र-सम्पादकों आदि को निमन्त्रण दिया गया था। कार्यक्रम में लगभग १०० प्रतिष्ठित व्यक्ति शामिल हुए।

ऊना सेवाकेन्द्र की ओर से गगरेट, मुबारकपुर हरौली, मदनपुर, बसौली, रेसरी आदि गांवों में प्रदर्शनियों तथा प्रवचनों द्वारा हज़ारों आत्माओं को प्यारे बाप-दादा का संदेश दिया गया। १८ जनवरी को भी स्मृति दिवस के अवसर पर एक सार्वजनिक कार्यक्रम रखा गया। जिसमें सैशन जज, पी० डब्ल्यू डी० के ऐक्सीयन, सी० एम० ओ०, डाक्टर, इंजिनियर आफिसरज तथा व्यापारी वर्ग के लोग पधारे। गीत-कविताएं तथा प्रवचनों से सभी बहुत प्रभावित हुए।

१८ जनवरी को 'पिता-श्री' का १३ वां स्मृति दिवस विभिन्न सेवा-केन्द्रों पर बड़े उत्साह के साथ धूमधाम से मनाया गया। इस अवसर पर स्नेह मिलन, व्याख्यान माला तथा सार्वजनिक प्रवचन आदि के भी भिन्न-भिन्न कार्यक्रम आयोजित किए गए। सेवाकेन्द्रों के नाम इस प्रकार हैं—हुबली, अम्बाला छावनी, फरीदाबाद, आदिपुर, रांची, रायचूर, जूनागढ़, गांधीनगर, रोपड़, कोल्हापुर, मिरजापुर, करौली (सवाई माधोपुर) पुणे, हुंसुंड (कर्नाटक), पेटलाद (गुजरात), सिद्धपुर, इलाहाबाद, मेहसाना, नासिक, औरैया, हजरतगंज (लखनऊ) आदि।

हुबली सेवा-केन्द्र से समाचार मिला है कि कर्नाटक तथा केरल राज्य के सर्व ईश्वरीय सेवाकेन्द्रों की इंचार्ज दादी हृदय पुष्पा के विदेश सेवा

पर रवाना होने के अवसर पर हुबली के प्रतिष्ठित व्यक्तियों तथा दैवी परिवार के सदस्यों द्वारा "विदाई समारोह" का आयोजन किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता हुबली और वाड़ महानगर सभा के कमिश्नर भ्राता जी० जी० पुरोहित ने की। मुख्य अतिथि भ्राता एस० एम० रंगरेजी, एसिसिटेंट कमिश्नर जी ने बताया कि "बी होली, बी राजयोगी" का सलोगन जीवन में धारण करना चाहिए। सभी ने दादी जी का बहुत उत्साह और खुशी से फूलों के साथ स्वागत किया। □

(पृष्ठ १६ का शेष-सतयुग और समय)

सृष्टि सदा के लिए सत है परन्तु उसके अन्दर पात्रधारी हम आत्मायें चक्र के रूप में पात्र बजाते हैं और आज का भूतकाल फिर से हमारा भविष्य बनेगा। समय का यह सत स्वरूप और सम्बन्ध हम आत्माओं के साथ है और इसीलिए भूतकाल का समय फिर से सत स्वरूप बनकर वास्तविकता का रूप धारण करेगा। सृष्टि के तथा समय के इस सत स्वरूप की यादगार में आदि-काल को सतयुग कहा गया है। जो आत्मायें इस सत की सत्यता को जानेंगी वही सतयुग में आ सकेंगी। □

चन्द्रपुर में 'स्मृति दिवस' कार्यक्रम के अवसर पर ब्र० कु० अशोक भाई सम्बोधन करते हुए। मंच पर (दाएं से) ब्र० कु० शंकर, ब्र० कु० कुमुम, श्रीमति जोसेफ़ जिला अधिकारी की पत्नी तथा भ्राता उपाध्याय, पुलिस अधिकारी बैठे हैं

हासपेट में पित-श्री जी के 'स्मृति दिवस' के अवसर पर कार्यक्रम में भाषण करते हुए भ्राता सुदीद्रा गयाज जी। मंच पर नरसिंह मूर्ति, ब्र० कु० शारदा जी, ब्र० कु० सत्यनारायण जी बैठे हैं

जगदीश चन्द्र हसीजा, सम्पादक, ब्र० कु० आत्म प्रकाश प्रकाशक, बी 9/19 कृष्ण नगर, दिल्ली ने चोपड़ा प्रिंटर्स, नवीन शाहदरा, दिल्ली-32 से छपवाया, Regd. No. 10563/65-D (E)—70